

अस्तित्ववाद

अस्तित्ववाद

महावीर दाधोच

एम ए पी एच डी

शब्दलेखा प्रकाशन, बीकानेर

० प्रकाशन

शब्दलेखा प्रकाशन

५ हागा बिल्डिंग

वीकानेर (राजस्थान)

० मुद्रण

माहेश्वरी प्रिंटिंग प्रेस

जागी बिल्डिंग

वीकानेर

• मूल्य ग्यारह रु थे

श्री कर्तिनाथ कुतुबोटी डफ् आचार्य जो
 श्री सुरेन्द्रनाथ मिश्रजगो डफ् प्रोफेसर
 श्री हर्षद देसाई डफ् देसाई
 डा० ओमानन्द सारस्वत डफ् चाचा
 डा० पवनकुमार मिश्र डफ् मोहब्बतसिंह
 को

उन रातों की याद में

जो चाय सिगरेट और तर्काश्रित आविष्ट आवाजों के माहौल से परिवेश
की जड़ता को सुबह तक परेशान किये रहती थी

और इस उम्मीद में

कि ये लोग इस पुस्तक को खरीद कर पढ़ेंगे।

महावीर दाधोच

अनुक्रम

प्राक्कथन

विषयसम्बद्ध ग्रंथ सूची

- १ इन्द्रिय विषय-लेखन पद्धति
- २ अस्तित्ववाद स्कूल रेखायें
- ३ कीर्तोगाद
- ४ काल यास्पस
- ५ मार्टिन हेडेगर
- ६ ज्यो पाल सात्र
- ७ मार्टिन बूबर
- ८ अ तत्

८

१०

१३

१८

२४

३६

५६

७६

११३

१२४

दूसरा मामा विषय-सम्बद्ध द्विती पारिभाषिक पत्रा को रहो है। अधिकांश मैन विषय तेलक क मून पत्रो क समिप्राय की व्यजना करन वान स्वनिमित्त द्विती पत्रा का प्रयोग किया है। मन्त्रिये यास्वम हेडेगर प्राप्ति क विवरण म मून एक हा पत्र क मिनायक समिप्राया का ध्यान म रमन हूप मैन डम एक पत्र क निय अनन अनन द्विती पत्रा का प्रयोग किया है। मरा उक्त द्विपिप समिप्राय का स्पष्ट करना रना है पारि भाषिक पत्रावता का निर्माण पत्रा।

नामकी सीमा या अमानव्य है और वह है नाम नगर आदि के उच्चारण की। इस अर्थ में मुक्त मानव नाम और नगरों के अग्रणी उच्चारण से साहस मिला है। उन्मत्त उन्मत्त और मुम्बई बोम्बे हो गया है। नम नम यहा या यन् उच्चारणगत नवीनता आ गई है तो सम्पत्त हानी चाहिये।

एकान्त एक और पर की सीमाया का उल्लेख मैं नहीं करूंगा।

एक स्पष्टीकरण भी। हेडेगर के प्रकरण में उसका अर्थ का समग्रत लिया गया है। भू (Being) का धारणा उसके बाद के अर्थ Introduction to Metaphysic के आधार पर विवचिit हुई है जब कि अर्थ वातें प्रमुखत Being and Time के आधार पर। कुछ विचारक हेडेगर के पूर्व और पश्चात में विरोध देखते हैं। पर मुझे विरोध नहीं लगा है। वस्तुतः भू की धारणा जो Being and Time में अस्पष्ट और कठिन सक्ति है, इस दूसरे अर्थ में अधिक स्पष्ट तथा मुखर हुई है। फलतः यह अर्थ विरोधी न होकर पूरक है।

अद्वय डॉ० छगन मोहता का अत्यन्त आभारी हूँ। उनका स्नेह ज्ञान और विचार का मैंने सुनकर शोषण किया है। मुहम्मद डा० पूनम दीया की अनन्यविष सहायता भी याद आ गई है।

दीकानेर

२५.३.६८

महावीर दाधीच

विषयसम्बद्ध ग्रंथ-सूची (अंग्रेजी में अनूदित)

I Kierkegaard

- 1 The Concluding Unscientific Post Script —Kierkegaard
- 2 The Present Age
- 3 The Sickness Unto Death
- 4 Peptition
- 5 The Concept of Dread
- 6 Either/Or
- 7 Fear and Trembling
- 8 Kierkegaard —W Lowrie

II Jaspers

- 1 Man In the Modern Age —Jaspers
- 2 The European Spirit
- 3 Perennial Scope of Philosophy
- 4 The Origin and Goal of History
- 5 Way to Wisdom
- 6 Reason and Existenz
- 7 Truth and Symbol
- 8 Tragedy is not Enough
- 9 The Philosophy of Karl Jaspers —P A Schilpp

III Heidegger

- 1 An Introduction to Metaphysics —Heidegger
- 2 Being and Time
- 3 What is Philosophy
- 4 The question of Being
- 5 The meaning of Heidegger / a critical study of
Existential Phenomenology —Thomas Langan
- 6 Kierkegaard and Heidegger The ontology of
existence —Michael Wyschogrod
- 7 Heidegger —M Grene

IV Sartre

- 1 Being and Nothingness —Sartre
- 2 The Psychology of Imagination
- 3 Existentialism and Humanism
- 4 Literary and Philosophical essays
- 5 What is literature
- 6 The problem of Method
- 7 Laudeur
- 8 Saint Genet
- 9 Portrait of the Anti Semite
- 10 Nausea (Novel)
- 11 The Age of Reason (Novel)
- 12 The Reprieve (Novel)
- 13 The Iron in the soul (Novel)
- 14 No exit The flies Nakrassov etc
(The plays and stories)
- 15 The Tragic Finale —Wilfred Deane
- 16 A Critique of J P Sartre's ontology
—Maurice Natanson
- 17 Sartre —Iris Murdoch
- 18 The Literature of Possibility —H E Barnes
- 19 The Ethics of Ambiguity —Simone de Beauvoir
- 20 Memoirs of a dutiful daughter ,

V Buber

- 1 I and Thou —Buber
- 2 Eclipse of God
- 3 Between Man and Man
- 4 Martin Buber Jewish Existentialist—Malcolm Diamond

VI General

- 1 Existentialist Thought —Ronald Grimley
- 2 Irrational Man —William Barrett
- 3 The Destiny of Man —N Berdyaev
- 4 Existentialism —Foultque
- 5 Beyond Existentialism —J V Rintelen

- | | | |
|----|---|----------------|
| 6 | Masters of Modern Thought | —G O Griffith |
| 7 | The Philosophy of Existence | —G Marcel |
| 8 | Existentialism and Modern Predicament | —F H Heinemann |
| 9 | Existentialism from Within | —E L Allen |
| 10 | Existentialism and Religious belief | —D E Roberts |
| 11 | Six Existentialist Thinkers | —Blackham |
| 12 | The Existentialists | —James collins |
| 13 | The Philosophy of Decadentism A study in
Existentialism | —N Bobbio |
| 14 | Dreadful Freedom A critique of Existentialism | —M Grene |
| 15 | Encounter with Nothingness | —H Kuhn |
| 16 | Existentialist philosophies | —B Mounier |
| 17 | Existentialism | —G de Ruggiero |
| 18 | A short History of Existentialism | —J Wahl |
| 19 | The challenge of Existentialism | —John Wild |
| 20 | Courage to Be | —Paul Tillich |
| 21 | Portable Nietzsche | —W Kaufman |
| 22 | Existentialism from Dostoevsky to Sartre | —W Kaufman |
| 23 | Existentialism For and Against | —P Roubiczek |
| 24 | Existentialism and Indian Philosophy | —Gurudutta |
| 25 | Age of complexity | —Herbert Kohl |

इन्द्रिय-विषय-लेखन पद्धति

(Phenomenological Method)

किंवा मी वस्तु या विषय व अध्ययन या प्रक्रिया रानि अध्ययन विधान पद्धति है । पद्धति अध्ययन व तथ्य और अध्ययन-वस्तु व रूप स्वभाव म अनुशासित रहती है । यह तथ्य वस्तु-भाषण अथवा तथ्य और वस्तु व अनुरूप होता है । यदि वस्तुपक्ष सत्य की प्राप्ति तथ्य म ना बौद्धिक पद्धति (rational method) का सत्यता सता अनिवार्य है । तभी परिस्थिति म मस्तिष्क (अध्ययन) और वस्तु (अध्यय) म द्वैत स्थापित होता है और वस्तु मस्तिष्क म विलीन हो जाता है । वस्तु म ऐन्द्रिय मान निव और व्यवस्थित मगता और मापगता व स्थान पर बौद्धिक निष्कर्षता और निरूपणता उपजाती है । तथ पद्धति का एक पूर्व धारणा (apriority or hypothesis) म प्रारम्भ होता है । फिर आगमन निगमन वजन प्रयोग आदि मरता आदि एतानक प्रक्रिया उपरगता और मापगता द्वारा वस्तु का एक परिभाषा प्राप्त की जाती है अथवा निष्कर्ष निरूपण जाता है जो मापगता मापगता मापगता और मापगता मार (essence) व रूप म होता है । विधान और अधिष्ठान बुद्धि मापगता प्रत्ययवादी (idealistic) दृष्टि म तथ पद्धति का प्रयोग किया जाता रहा है । आत्मपर मर्य का प्राप्ति के लिए मन्त्रानुभूतिनिष्ठ (intuitionist) पद्धति काम म ला जाती रहती है । तथ पद्धति म किंवा विषय प्रक्रिया या अनुमर्गम नया दिया जाता और यह पूरा तथ्य व्यक्ति मापगता जाता है । तथ का पूर्वधारणा नया जाता । मन्त्रानुभूति ही धारणा और निष्कर्ष का एक धारण कर जाता है । य निष्कर्ष सामान्य (general) और मापगता (universal) तथ तथ मापगता

- | | | |
|----|--|----------------|
| 6 | Makers of Modern Thought | —C O Griffith |
| 7 | The Philosophy of Existence | —G Marcel |
| 8 | Existentialism and Modern Predicament | —F H H inemann |
| 9 | Existentialism from Within | —L I Allen |
| 10 | Existentialism and Religious belief | —D E Roberts |
| 11 | Six Existentialist Thinkers | —Blackham |
| 12 | The Existentialists | —James collins |
| 13 | The Philosophy of Decadentism A study in
Existentialism | —N Bobbio |
| 14 | Dreadful Freedom A critique of Existentialism | —M Grene |
| 15 | Encounter with Nothingness | —H Kuhn |
| 16 | Existentialist philosophies | —B Mounier |
| 17 | Existentialism | —G de Ruggiero |
| 18 | A short History of Existentialism | —J Wahl |
| 19 | The challenge of Existentialism | —John Wild |
| 20 | Courage to Be | —Paul Tillich |
| 21 | Portable Nietzsche | —W Kaufman |
| 22 | Existentialism from Dostoevsky to Sartre | —W Kaufman |
| 23 | Existentialism For and Against | —P Roubiczek |
| 24 | Existentialism and Indian Philosophy | —Gurudutta |
| 25 | Age of complexity | —Herbert Kohl |

इन्द्रिय-विषय-लेखन पद्धति

(Phenomenological Method)

किया भा वस्तु या विषय व अन्तर्गत का प्रक्रिया गैरि अथवा विज्ञान पद्धति " । पद्धति अथवा न कथ्य और अध्ययन-वस्तु के रूप स्वभाव में अनुमानित होता है । यह कथ्य-वस्तु-भारत अथवा कथ्य और वस्तु व अनुमान होता है । यदि वस्तुपक्ष पर का प्रारम्भ कथ्य है तो बौद्धिक पद्धति (rational method) का महत्ता उक्त अनिवार्य है । तभी परिस्थिति में मन्त्रिपत्र (अध्ययन) और वस्तु (अध्यय) में द्वैत स्थापित होता है और वस्तु मन्त्रिपत्र में अन्विष्ट हो जाता है । वस्तु में अन्विष्ट मान मित्र और व्यक्तिगत मन्त्रिपत्र और साधनता व स्थान पर बौद्धिक निष्पत्ति और निष्पत्ति उपपत्ति है । यह पद्धति का एक पूर्व धारणा (apriori or hypothesis) में प्रारम्भ होता है । फिर आत्मन निगमन वृत्त प्रथा द्वैतत्वमन्त्रिपत्र अन्विष्ट एकात्म प्रक्रिया उपपत्ति और भावना द्वारा वस्तु का एक परिभाषा प्रारम्भ हो जाता है अथवा निष्पत्ति निरूपित होता है । तब सामान्य भावमोम भावनात्मिक और भावनात्मिक सार (essence) व रूप में होता है । विज्ञान और अधिकांश बुद्धि भावना प्रत्यक्षता (idealistic) होता है । तब पद्धति का प्रारम्भ किया जाता है । आत्मन सार का प्रारम्भ व निगमन सन्तानुवृत्ति (intuition) पद्धति काम में हो जाता है । यह पद्धति में किया निगमन प्रक्रिया का अनुसरण नहीं किया जाता और यह पूर्ण रूप व्यक्ति-भाषण होता है । तब कोई पूर्वधारणा नहीं होता । अनुमानित हो धारणा और निष्पत्ति का रूप धारण कर होता है । य निष्पत्ति सामान्य (general) और भावमोम (universal) होने का वक्तव्य

यथ म सामान्य सावभौम और सावजना नडा हान क्याहि नव मता सत्य वा वस्तुपरक पराक्षग अशय है । य प्रचनन व लिए बुद्धि व स्थान पर शिष्यास और श्रद्धा पर आश्रित रहते हैं । रहस्यवात् धर्म आदि का बता का निरूपण न्य पद्धति में आता रहा है ।

चूँकि अस्मिन्त्वबाली सामान्य सावभौम सावजानि और सावदेशिक मार अथवा सत्य में विश्वास नान करते और न व पूणत सन्ज्ञानुभूति वे विवकातीन निष्कर्षों में ही आस्था रखते हैं । फलतः शानो ही पद्धतिया उन्हें अपूण और अनपयोगी लगती हैं । उनका उय निर्जीव निरिप्त और अपूण मार को प्राप्त करना नही है तथा उनका विषय-अस्तित्व-भी स्थिर निश्चित और सीमित नही है । वे निरन्तर प्रवहमान अस्तित्व को सम्यक् पहचान करना चाहते हैं । परिणामस्वरूप वे नित्य विषय योग्य पद्धति का आशय लेते हैं ।

इन्द्रिय-विषय (Phenomenon)

Phenomenon और अनु Phainesthai में अन्तर = जिनका मून अर्थ है प्रकट आना । अर्थात् ये विषय जो चेतना में परक आते हैं । मूगने शब्दों में य विषय जिनका माया बाध मन नित्यता द्वारा प्राप्त करता है । न्य तरह विषय या वस्तु का रूप है । एतद्विषय बाधमय रूप अर्थात् जिन रूप में य प्रकट हात है बाधित आन है या प्रकट आत है तथा दूसरा-विषय का प्रकट रूप जो इन्द्रिय निरूपण फलतः चेतना में धर्मपूरा और शुद्ध आता है और जो वात् य अनमात्र बौद्धिक सन्ज्ञानुभूति का ही विषय है । हेगल (Hegel) नित्य विषय का अर्थ विषय तर भी सीमित नही शब्दा यति आग्रा सावनामा मिद्वाना आदि का भी वह न्यक अनगत मानता है ।

म तब में वाता-मयता अनभूति रूप विषय हा नित्य विषय है ।

इन्द्रिय-विषय लेखन पद्धति

नित्य विषय अथवा नित्य विषयवात् का आरम्भ या उत्पत्ति का कारण आदि पुरवर्ती शक्तिता में प्राप्त आता है । चित्तु जिन हर में य आरम्भ अस्मिन्त्ववात्ता में आता है नही है उस नित्यविषयवात्ता का पुरस्कार हमारा (Hierarchy) या हमारा अस्मिन्त्ववात्ता नान आता । उसका आता

अपन अन्तिम रूप में अद्वितीयाना प्रत्यक्षवादा है ना भी हम दान का प्रारम्भिक धारणाओं न जमन और प्राप्तिमा अन्तिमवादा का अन्तिम प्रभावित किया है । अन्तिम का मानना था कि पूर्ण सम्पुष्टता (objectivity) प्राप्त करने के लिए दानानिष्ट के लिए यह अनिवार्य है कि वह अपना पूर्ण ध्यान उस विषय के लिये या उस पर वर्तित करे ता चेतना के प्रति प्रकट होता है । दूसरे शब्दों में वह इंद्रिय विषय का लिये करे । क्योंकि बाप प्राप्त करना और कार्य करना धारणा करने का एक ही है । चापित होता बचन देखना है । अद्वितीय विषय स्वयंमय अपन आपका चेतना के परितुल्य में अभिन्नात (manifest) करना है । यही हमका मन्त्रा धार सम्पुष्टता रूप है । इसीलिए विषय के प्रति पुनर्गमन का बाप हमका करता है । अन्तिम हम बाप पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए कि ये विषय इंद्रिय विषय है । माध्यात्मिक विषय नहीं है जो बहानिक अथवा प्रत्यक्षवादा अनामि । अन्तिम है । निष्पत्ति करता जा सकता है कि अद्वितीय विषय चेतना का विषय है ।

अद्वितीय विषयवादा का पूर्ण तर्क समझने के लिए अन्तिम की चेतना का धारणा का विवरण आवश्यक है । अन्तिम के प्रभाव में हमका चेतना का निष्पत्ति (intentional) मानता है । चेतना मन्त्र स्ववादा विषय (object) की धार निष्पत्ति अथवा उद्घाटन (pointing to) करता है । अर्थात् यही का चेतना है । दूसरे शब्दों में चेतना मन्त्र किसी विषय की चेतना है । चेतना हमका रूप में गुण है अर्थात् शून्य है । पूर्वाग्रह धारणा या प्रत्यक्ष धारणा में यह गुण भुक्त है । अन्तिम प्रत्यक्ष धारणा विवेकी चेतना (reflective consciousness) का मन्त्र है अर्थात् यही चेतना में पूर्ववर्ती नही अनुवर्ती है । चेतना गुण चेतना में अन्तिम विवेकी नही है । चेतना का यह दूसरा विवेकी रूप प्रत्यक्षवादा अन्तिम विवेकी मन्त्र तर्कवादा अर्थात् अन्तिम अन्तिम धारणा का आधार है । चेतना हमका व अनुमान अन्तिम धारणा व परिणाम या अन्तिम या अन्तिम है अर्थात् अन्तिम विषय या विवेकी (distorted) और अन्तिम रूप अन्तिम किया जाता है । अन्तिम धारणा के लिए यह धारणा है कि वह इंद्रिय विषय का चेतना विवेकी कर अर्थात् विषय के चेतना का मन्त्र अनुभव (immediate experience) का लिये विवेकी है अन्तिम विषय का मन्त्र गुण प्रकट कर सकता है

असम यह स्पष्ट जाता है कि जो प्रकट जाता है अथवा बनता है धर्म में जो विषय आता है उसका ठीक वर्णन कर देना त्रिद्वय विषय तत्त्व पद्धति है। इसमें किसी प्रकार की पूर्वाग्रह (apriority) और पूर्वाग्रह (prejudices) नहीं आते। फलतः असम मंडालीन अथवा व्यावहारिक पूर्व योजना (postulates) या सा य के लिए बन्धन नहीं करता है। ऋषि हस्ति (revelation) और परम्परा का मान भी अस्वीकार्य है। असम यह पद्धति आगमन और निगमन दोनों बौद्धिक पद्धतियों का अन्वयन करना है यद्यपि अज्ञान बौद्धिक पद्धति के एक मात्र धर्म का सम्मिलन नहीं है तथापि यह वर्णन के द्वारा कुछ मिश्र नहीं करता अथवा कोई निश्चित सारभूत निष्कर्ष नहीं निकालता।

ह्नेगर सात्र धार्मिक मनोपाटि आदि अस्तित्ववादी विचारक पद्धति के उपपन्न स्वस्थ से शायद सम्मिलन होगा।

असम का अर्थ प्रत्ययवादी और अर्थपरक (of meanings) है अस्तित्व परत नहीं। दूसरा यह हमारे न असम पद्धति का ही पूरा दर्शन या बात का रूप न दिया है। यह अर्थ बहुत प्रचलित शब्दोंपर (reductions) के द्वारा अर्थ विषय का बौद्धिक धारणाधारी में जो मुक्त नहीं करता बल्कि मानसिक प्रतिक्रियाधारी (psychic responses) में भी स्वतंत्र कर अतिरिक्तमयी चेतना (transcendental consciousness) का पहुँचना है। यह अतिरिक्त चेतना उस अन्तर्गत मन्द ज्ञान या सत्य का आधार है। मात्र अर्थ आदि अस्तित्ववादी चिन्तक न सन्तुष्टों का अस्वाभाविक परत है क्योंकि अर्थ विषय में आत्म ज्ञान की आवश्यकता है व सम्मिलन नहीं करता। व असम का निष्कर्ष चेतना का अर्थ करना है। चेतना अर्थात् की चेतना नहीं है। अतः अर्थ अस्तित्ववादी असम बतल साधन या पद्धति के रूप में नहीं है जो मानस अस्तित्व व सत्य रूप स्वरूप के उद्घाटन में सम्मिलन है। उनका उद्देश्य अस्तित्व का धारणा बनाना न। अस्तित्व व सत्य अनुभव का प्रमाणपूर्ण रूप में परतना है। व शिवा अमृत सत्य का प्रतिपादन नहीं करना बल्कि अनुभव व मृत और नाशकाय व तः वर्णित करना चाहता है जो उनका अर्थ सम्मिलन आता। यह सत्य मृत सत्य है जिस में अस्तित्व ज्ञान व साक्षात्कार करना है। अस्तित्व कुछ अस्तित्ववादी (मात्र सम्मिलन का अर्थ) अस्तित्व नाश करना आदि साक्षि

मायमा से अपनी बात प्रकट करते हैं । उनका उद्देश्य—मादमन द बाबाय क शान्ते म—अस्तित्व की त्रियमाण अवस्था का चित्रित करना है ।

यस पद्धति का प्रचलन यद्यपि काकोगात् न पश्चात् हुआ है तो मा कीकोगाद का लखन भी इसी पद्धति से मिलता जुलता है । मास्पस और मासल यस पद्धति का उपयोग करते हैं । बहुतांश म हडगर और साध का विवचन मा इस पद्धति के माध्यम से हुआ है ।



अस्तित्व-वाद कुछ स्थूल रेखाये

अस्तित्व वाद की परिभाषा देना यत्न भक्ति-न वाय है क्योंकि अस्तित्व वाद स्वयं किसी परिभाषा में विश्राम नहीं करता। परिभाषा देने का अर्थ यत् है कि अस्तित्व का ऐसा रूप स्थिर कर जेना जो परिभाषा में अवधि-न नियमा द्वारा पूरी तरह में अनुशासित रहे जिसका भूत-वर्तमान और भविष्य उस परिभाषा में सीमित हो जाय। अस्तित्व वाद के अनुगार मनुष्य के अस्तित्व की परिभाषा कम रूप में तथा ही जा सकती क्योंकि मनुष्य के भविष्य के बारे में किसी निश्चित नियम का निर्माण तथा किया जा सकता। वह मृत रूप में स्वतन्त्र है जिसका सभी परिभाषाओं का अनिवार्य वर्णन करना है। उनसे अनुगार अस्तित्व का (10 १९१५) का मतलब है वह ऐसा जीवन वह ऐसी गति जो मृत प्रसार के नियमों का तात्पर्य प्रदान करता है। ऐसा मृत इच्छा कि अस्तित्व वाद जिस भी प्रकार के अर्थों या मार्ग में विश्राम नहीं रखता। मनुष्य का मार समुद्र जाता है। मृत मृत गुण और आधुनिकता में जीवन रहने जहाँ जहाँ विचार का रूप धारण कर जाता है तो उस अर्थ मार्ग की मता जैसे है। मात्र न मज का वह उत्पन्न होता है। मृत का उत्पन्न करने वाला ने अस्तित्व में भेजता एक रूप तथा जहाँ अर्थों वह विचार। मज का मरती है अर्थों उगती निर्मिति का एक आधार है। अम मज का मार निरस्त जा सकता है और वह मार है मृत मरणा विचार। अम मज के भूत-वर्तमान और भविष्य का पूरी तरह में ज्ञान करने है। ऐसे वार ॥ अर्थों-वाणी ही जा सकता है कि यह निर्णय तात्पर्य यत् अर्थों फल उठा है और जाता फल दोनों है अर्थों धारि। अम मार में मज का तात्पर्य दृष्टिगत जाता है यह विचार मार मार

हम काम में चेत है वह स्पष्ट नहीं होता। वह स्पष्ट नहीं होता है और एक ऐसा विचार उत्पन्न होता है जो पूर्ण तरह में अमूर्त और निष्प्रयोजन है जिसमें किसी भी प्रकार की आत्मपरकता नहीं होती। साथ ही अनुसार मनुष्य भोज नहीं है क्योंकि उसका उस स्पष्ट में परिभाषा नहीं हो पा सकती। इसका अर्थ यह है कि अस्तित्व-वाद में वर्ण की जिज्ञा और विचार जाना एक दूसरे के पूरक ता अवश्य है। पर विचार के पूर्व क्रिया का स्थिति = जिसका हम इस तरह कह सकते हैं कि सार में पद अस्तित्व आता है। (existence precedes essence—Sartre in existentialism and humanism) इसका अर्थ यह है कि मनुष्य सार नहीं है क्योंकि उसकी परिभाषा जानना संभव है।

मनुष्य सांख्यिक ज्ञान में पड़ता है वा सचा प्राप्त करता है। ज्ञान का अर्थ है जो मनुष्य है और यह है किसी निश्चित स्वरूप में नहीं आता। मनुष्य उस ज्ञान का प्रक्रिया में वह ज्ञान पूर्ण तरह में अनुभव करता है कि चेतना के रूप में वह कुछ नहीं है अतः चेतना में किसी भी प्रकार के पूर्वाग्रह विचार या पूर्वधारणा नहीं आती। वह किसी भी प्रकार के वर्धन से बढ़ नहीं है। दूसरी तरफ वह यह भी मान्य करता है कि वह वस्तु (आंतरिक) नहीं है। अस्तित्व वस्तु में और मनुष्य का चेतना में एक प्रकार का तनाव संभव रहता है। चेतना उसमें स्पष्ट नहीं आता जानता = अतः वह ज्ञान स्पष्ट धारण करना चाहती है जिससे निश्चित परिभाषा भी हो सकती है सार बनाया जा सकता है। दूसरे शब्दों में मनुष्य चेतन ज्ञान हुए वस्तु की स्थिति प्राप्त करना चाहता है। प्राचीन ज्ञान के प्रत्यक्ष ज्ञान आसक्ति विचार और अज्ञान वास्तविक निष्पक्ष जो मनुष्य का सार के रूप में परिचित करते हैं। मनुष्य का ज्ञान निश्चित धारणा जानना है और यह प्रकार में वह मनुष्य की स्वतंत्रता उसकी सम्भावना और उसकी क्रिया का कारण का चर्चा करने है। अस्तित्ववादी अस्तित्व ज्ञान में विश्वास नहीं करता क्योंकि उसका विश्वास है कि ज्ञान का मतलब है अणु और अन्तिम (unique) ज्ञान। विश्वास न स्पष्ट करने है कि मेरा मातृका व्यक्ति = (my category is the individual)। अतः अस्तित्ववादी ज्ञान अज्ञान ज्ञान विविध रूप में ज्ञान जानना चाहता है। या हम यह निष्पक्ष प्राप्त कर सकते हैं कि सचा अस्तित्ववादी मनुष्य का ज्ञान के रूप में प्रधानता नहीं है। अतः सार में वह सचा जो अज्ञान ज्ञान परत स्थिति है।

यह 'यकिन भी अपने-ठा 'यकिन है जिम्मे पाम वि-ही परम्परागत भूयां का आधार नहीं है अतः जो भी करता है उसका निम्न वह स्वयं जिम्मेदार है। यदि उसका उपदेश देने वाला या मार्गदर्शन करने वाला प्राप्ति नहीं है। उसे स्वयं का चुनाव करना पड़ता है और यह चुनाव उसके स्वयं के जीवन प्रयत्न का 'यकिनियों के जीवन जिनमें उनका सबंध है सब का निर्माण करता है। अतः यह बहुत बड़ा उत्तरदायित्व का कार्य है। उसने इस चुनाव पर इस तरह से पूरे समाज की व्यवस्था पूरे समाज का रूप निर्माण निम्न करता है और वह यह चुनाव किसी की सहायता से नहीं करता। अपनी चेतना के द्वारा ही उसे यह चुनाव करना पड़ता है इसलिये 'यस चुनाव के जो भी प्रतिफल होते हैं उनसे लिए वह अपने आपका एक भागीदार समझता है। 'यसमें यह बात भी स्पष्ट हो गई कि अस्तित्ववादी केवल एक 'यकिन की धार नहीं करता जो समाज निरपेक्ष होकर एकांत में किसी जगह में जाकर साधना करता है बल्कि उस 'यकिन की धार करता है जो दूसरे 'यकिनियों के साथ रहता है। दूसरे 'यकिनियों के संपर्क में आता है। दूसरे 'यकिनियों से आवात्मक और विचारारम्भ रूप से मध्य होता है अतः 'यकिन 'अपने 'समाज का निर्माण करता है। यह अपना सारा वास्तव में उसकी आत्मा का या चेतना का समावेश है। जो वस्तु वह देखता है जिन 'यकिनियों के वह संपर्क में आता है जिन परिस्थितियों का वह आवात्मक या अन्य स्तर पर जीता है या विचार कर पड़ता है प्रयत्न सुनता है उन सबका वह एक धार्मिक रूप देता है। और फिर उन सब का अपने अन्तर में अनुसार पुनर्निर्माण करता है। 'यस तरह से बौद्धिक का या सांस्कृतिक का वस्तुपरक समावेश उसका कार्यक्षेत्र नहीं है जिसमें किसी तरह की भागीदारी नहीं होती जिसमें किसी प्रकार का सहभागिता (participation) नहीं होता। उस समाज के लिये वह स्वयं जिम्मेदार भी है क्योंकि जब वह चुनाव करता है तो वह अपने लिये ही चुनाव नहीं करता बल्कि 'यस पूरे समाज के लिये चुनाव करता है और चुनाव करते समय अनुपम की और समाज की एक धारणा का स्वयं निर्माण करता है। इसलिये उस चुनाव के द्वारा वह 'यस पूरे मानव समुदाय और समाज के लिए उत्तरदायी सिद्ध होता है और 'यस चुनाव में वह विमाना बाहरी शक्ति का सारा नहीं करता। वह अपना चेतना के द्वारा ही अपना यह चुनाव करता है 'यसलिये उसका मन में एक प्रकार की शक्ति 'यसला रहती है। क्योंकि वह अपने नियम का अनुसरण या प्रतिष्ठान का बाध में निश्चित नहीं रहता। यह

अश्विना उमर मानविय जगन ही अश्विना ॥ यः माय का अस्वर रज
 जान ता अश्विनि नया है अश्वि जा चुनाव दिया ॥ उमरही ममावना उमर
 द्वारा पर र प्रभाव म वर पाडिन जाता है और यह अश्विना आयतिन परि-
 मितिया म मय पर धनाभूत जाता ॥ अश्विना अमा परिमितिया म मनुष्य
 म च रूप म जाता ॥ जम मय र मय अमा अश्वि र माता माय जाना
 ॥ उम मय र अश्वि व मायन अमा नर ही जानन रा रागणा तहा है ।
 नर स्वय उम गाली व अश्वि या मृत व अश्वि तिमर र जाता ॥ और उवकी
 चनता पूरा नर म पूर जाता है ।

अश्विना रा अर म मानवाय जाता । र मनु रता र र न म अरग रता
 जाता । नर अमा प्रार रा मा अश्वि पर अश्विना नया करता । र
 अमा अश्विनापर रन ही अश्विनी की चला तहा रता और न अमा अश्विना
 लक रर पर जानन-यापन रन रा चला करता ॥ र ता जमा मनुष्य है
 जम रूप म मनुष्य अरन अरना बनाना चाना है ॥ रूप का रणन करन
 पा करता है । वणन अश्विनि र उमर अनुमा अश्विना का वणन रा
 दिया जा करता है । रणन रा का अमा पदनि है तिमर परिभाषा का
 निमाण नया जाता जा मातामय नया ॥

मनुष्य ममावना है अश्विना नया है । मनुष्य का पूर र मा अश्विना अश्वि
 तराश्विना र अश्वि मनुष्य नया है । वनमान र पूररात रान रा अश्विना
 रूप म अश्विनि नया जाता है । और मय म और पूर म का पर नया रता ।
 पूर मनुष्य का कायअश्वि मनुष्य रा ममावना नया मनुष्य का यावना (शानक)
 रा अमा रा प्रार म अनुमाअश्वि नया करता है । र र मनुष्य रूप म
 अश्विना अश्विना अनुमाअश्वि नया करता ॥ अश्वि व अनुमाअश्वि जाता है ता
 मनुष्य डा रता मा व ममान डा रता ॥ ता मनुष्य अमा नया वर जाता
 व अश्विना प्रवचर थडा (र ७३) र अनुमा अश्विना रता है । वर
 मनुष्य जाता है और अश्विना म व ममा जान रता नया रता ।
 अश्विना मनुष्य अश्विना अश्विनाअश्विना प्रमाणा । र र रता रता रता
 अश्विनाअश्विना ॥ व र रता म व अश्विना रता है । अश्विना अश्विना
 अश्विना व अश्विना ॥ अश्विना व अश्विना निमाण अश्विना अश्विना ॥
 और डा अश्विना व निमाण म पूर अश्विना अश्विना म अश्विना नया जाता
 अश्विना अश्विनाअश्विना प्रमाणाअश्विना जानन (अश्विना रता रता) व अश्विना रता

उमका जन्म हुआ। वह मान बच्चा में धर्मिण था। उमक मातापिता कपूर परिवार के थे। उमका पिता हुआ स्वभाव का था। उमका पिता जब बच्चा था तो एक दिन भूमि में जब वह खेल रहा था अपनी दुम धूम जिनका वह निरुपम दमक का बुरा बना वह किया। हुआ में अपनी मृत्यु के समय उमक अपने कम पाप का कीर्तन के सामने स्वीकार किया। कीर्तन प्रारम्भ में ही अपना धार्मिक धार्मिक बलि का था कि वह कम स्वीकार में बहुत अधिक विचलित हो गया और उमक कम में यह सब निश्चय कि आज में इसका काय या अधिकांश पूरे परिवार पर होगा। ऐसा कारण वह अपने बचपन का अच्छी प्रकार में मुक्त पुरुष नहीं किया मका। वह अपनी पुस्तक में स्वीकार करता है कि वह कभी बच्चा था ही नहीं। कभी जवान न। ऐसा। कभी मनुष्य नहीं बना। कभी जिन नहीं रहा। उमे कभी भी दूसरे व्यक्तियों के साथ सख्त संबंधों की अनुभूति नहीं हुई। इसलिए वह हमेशा एक प्रकार के वियोगभूत जीवन में ही रहा है। वह छपनामा के कालांतर जीवन में विचरण करता था। मृत और विविधधारण में भी वह अजनबी सा रहा। यद्यपि वह बहुत ही हासिलार आनंदान करने में कुशल और अपने प्रति मंत्राव करने में मग्न रह चुका था। उम कास में हासन का दान बहुत अधिक प्रचलित था। उमक भी शीघ्र के दशन का पत्नी और बाप में बहुत ही गट कर विगम किया। १८४० में अपने धर्म विज्ञान का परीक्षा पास की और पत्नी रत समानाती में भर्ती हो गया। अभी मान वह अपना प्रेमिका रगिता आत्मन में एगज हुआ और वह एगजमें १८६१ में उमने ता किया। यह अभी पत्नी थी जिसने उमक आध्यात्मिक जीवन और मानविय जीवन का बहुत गहराई में प्रभावित किया। अब बाप उमने बहुत किया। उमक उमन-नाम न डेनिश पत्र पत्र पत्र का उमका जन्म बना किया। यह एक लमा पत्र है जो खच का समयन करता था। धर्मिण समय में कीर्तन के खच की मान्यता का बहुत बुरे तरह से विरोध किया। कम विगत के रागम उमका माध्यम छोटे छोटे विगमता गया और १८५५ के २ अक्टूबर का कापेनहगन की सत्र पर पत्नी ऐसा वह फिर पत्नी और जन्मी की अवस्था में ही वह ११ नवम्बर का मर गया। कीर्तन का पूरा जीवन अपरमरा अमर्ति और अमादम्ब्य में ही व्यतीत हुआ। उसका प्रभाव उमक दान पर भी पड़ा है।

कीर्तन सच अथ में धर्मित्ववादी नहीं है। धर्मित्ववादी का मान हम जो अथ दामवी गवाही में रहे हैं वह धर्मित्ववादी उमक नहीं मितता। फिर

ज्ञान में कीर्तन के अनुसार यह युग मिथ्यात्वपूर्ण है। यह युग या जीवन का युग नहीं। धर्म का युग नहीं।

अस्तित्व के हीनता के अमूल्य विचार सामान्य मिथ्यात्व पर उसके वा-
उसके सत् अस्तित्ववादी और बुद्धि के माध्यम (mediation) का विचार करता
है। उसके अनुसार हीनता का अर्थ प्रतीति (conscience) नहीं करता। इसलिए
उसमें जिज्ञासा जागृत नहीं है। कीर्तन में अमूल्य के विरुद्ध व्यक्ति की रक्षा करता
है अर्थात् उसके अनुसार व्यक्ति प्रमुख है। व्यक्ति का भावनाएँ उसके व्यवहार
उसके जीवन के आधार उसकी निर्गुणता—यही सब सत्वा जीवन है। जो
दृष्टान्त उस जीवन की अवधारणा करता है वह दृष्टान्त केवल बौद्धिक विचार है।
सत्वा अर्थ एक वास्तविक मानव की परिस्थिति का एक न और व्यक्तिनिष्ठ
रूप में अध्ययन करता है। कीर्तन का यह विद्रोह अथवा यह विरोध धार्मिक
प्रवृत्ति का अर्थ है। यह मन प्रसार के वस्तु पर न जान वस्तु पर न मायता
और स्वनिष्ठ न विचार का अनुपयोगी मानता है। वह कहता है It is only
systematists and objective philosopher who have ceased to
be human beings and have become speculative philosophy in
abstract an entity which belongs in the realm of pure being



कीर्तन व्यक्ति के अन्तर्गत की नहीं व्याख्या करता है। उसके अनुसार
आत्मा का या चेतना का मूल में बुद्धि का जाना सत्वा अर्थ अन्तर्गत है। यज्ञ
पर कीर्तन हीनता में समावेश है। हीनता के अर्थ यह यह बात मानता है कि
अन्तर्गत-मनस्विता में ही अन्तर्गत है। चेतना के अर्थ विरुद्ध अमूल्य या सामान्य
य मनस्विता के अर्थ पर व्यक्तिगत अन्तर्गत है। अन्तर्गत करता है। अनुपपत्ति की
बौद्धिक समझता का एक प्रकार के अन्तर्गत का प्रकाश करती है। लेकिन यहाँ
उसका व्याख्या कुछ भिन्न है। अनुपपत्ति न अथवा आत्मा का बुद्धि का अर्थ है अनु-
पपत्ति न अनुपपत्ति जाना सत्वा कर लिया है और वह धार धीरे धीरे धीरे जाना जा-
गता है। वह अन्तर्गत वस्तुओं का जानता है कि वह अन्तर्गत सामान्यता में ही नहीं
मनता। वह अन्तर्गत में गया है और उसका मूल जिज्ञासा जागृत नहीं हो गया
है। वह अर्थ अर्थ न। अन्तर्गत है और अन्तर्गत में वह अन्तर्गत ही नहीं है
दार्शनिक व्याख्या रूप में वह सत्वा जाना अर्थ अर्थ अर्थ है।

कीर्तोगात्र के अनुसार यह आत्म विच्छिन्नता प्रत्यक्ष व्यक्ति की आत्मा में ही रहा किया है। तबिन उमरा मन्त्र बाहर में नहीं है। यह एक प्रकार का आंतरिक मन्त्र है और उसकी स्थिति व्यक्ति के अपनी आत्मा के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण में है। तबिन कीर्तोगात्र की आत्म विच्छिन्नता का एक मनोवैज्ञानिक आधार निम्नलिखित है। वह इस विच्छिन्नता को दुःखिता (anxiety) के रूप में वर्णित करता है। दुःखिता भय से भिन्न है। भय का एक निश्चित कारण होता है जब मुझे साफ में डर लगता है। किन्तु दुःखिता का कोई निश्चित कारण नहीं होता। तबिन मन्त्र किसी वस्तु विशेष में नहीं होता तबिन वह सम्पूर्ण और आनन्द का मकड़ के आभास पर आधारित रहती है। दुःखिता मन की होती है। यह दुःखिता मन्त्र व्यक्तियोग में है एसा कीर्तोगात्र मानता है। इस दुःखिता में मनुष्य का व्यक्तिपरता अपना स्वतन्त्रता खूब जाती है उसका सामाजिक संबंध इस दुःखिता के कारण बिगड़पूरा हो जाते हैं। कीर्तोगात्र में अपनी पुस्तक 'The concept of dread' में दुःखिता का विशेष विवरण दिया है और तबिन सब आत्मपरता में क्या गहरा और मनोवैज्ञानिक बताया है। वह इसकी परिभाषा इस तरह देता है—जब व्यक्ति किसी ग्राहरी शक्ति में इतना अधिक भयभीत हो जाता है कि उस अपने नाश की संभावना महसूस हो यह स्थिति ही दुःखिता है।

अपनी दूसरी पुस्तक 'Sickness unto death' में वह इस आत्म विच्छिन्नता के दूसरे स्तर पर पहुँचा है। यहाँ पर दुःखिता समीर निराशा में परिवर्तित हो जाती है और यह निराशा मृत्युपरमन राग है। इस पुस्तक में जो वर्णन है वह इन्हीं विषय वर्णन पद्धति का है। यह व्याख्या परिचित, अस्मिन् वर्णन मनोवैज्ञानिक के लिए आधार रूप रखती है। कीर्तोगात्र के अनुसार व्यक्ति का अपना आत्मा के प्रति संबंधगत अवस्था में निराशा उत्पन्न होती है। दूसरे शब्दों में व्यक्ति के आत्मरूप वर्णन का प्रक्रिया में जब बाधा उत्पन्न होती है तब निराशा की उत्पत्ति होता है। यह आध्यात्मिक व्यक्ति का एक विशेष प्रकार का राग है जो अपने आप में अन्तर्गत करने के प्रयत्न में ही पड़ा जाता है। अपना जो कुछ उगम आशय है उसका उपयोग में या अपनी आध्यात्मिक प्रवृत्ति का भूत राग में उपयोग में है। कीर्तोगात्र के अनुसार इसका रहित और आत्मातीत व्यक्ति हमारा निराशा में आशय में होता है। इस निराशा के रूप का वर्णन कीर्तोगात्र ने किया है। यह निराशा अन्तर्गत स्तर पर भाग्य परता है जब कि व्यक्ति अपनी इस निराशा का जानबूझकर नष्ट रखता

और यह चेतन प्रसिद्ध है कि जो भी यह पद जानता है कि यह निराशा है। बीजवाचक या भाषा मनुष्य समाज और अग्रिम समाजों और निषेधिता समुदाय है। उन लोगों का मैं स्थापना करता हूँ। मनुष्य स्वयं का अमीय समुदाय है। यह अमीय जनता चाहता है और वास्तव में उस पद को चाहता है कि वह अमीय है। यह मनुष्य का अर्थ अग्रिम ना वरत प्रदर्शित है। वह अपनी अमीयता पर प्रीति रखता है यह पद वर निराशा का भाव है और यह निराशा के कारण यह अग्रिम आत्मा का भूत जाता है। अग्रिम और समाज का भाव जानकर वह वह भुक्तता चाहता है। इस प्रकार वह अपनी समाजों के आधार पर मनुष्य का समाज बनने का प्रयत्न करता है कि तु आशा का भाव है कारण उनकी यह स्वयंसेवा प्रदर्शित है और वह निराशा के भाव में रह जाता है। व्यक्ति में अग्रिम यह निराशा के दो निष्पादन अर्थ प्रिया है। यह आत्म रूप का प्राप्त करने का प्रयत्न करता है जिसमें निराशा उत्पन्न होती है अथवा वह यह निराशा से बनने के लिए आत्म रूप प्राप्त करने की प्रयत्न करना है। फिर भी यह निराशा के अस्तित्व में भूत न हो सकता है। क्योंकि यह आत्म रूप (himself) जान का प्रयत्न न करने में भी उद्यत है निराशा के भाव अथवा आत्म रूप प्राप्त करने की प्रयत्न में होता है। यह रूप में अपनी समुदायों के भाव में निराशा उत्पन्न होगी जबकि हमारे रूप में समुदाय प्रतीति के भाव में यह जनमणी है।

प्रकार व यन्त्रिणा का समान नया है। तार्किक का यन्त्रिणा धर्म पर
 आधारित है। तत्त्व व सम्पूर्ण समझना - यन्त्रिणा के तम व मच्च ग्रथों
 में यन्त्रिणा का मत है क्याकि इन सब भावा का अनुभव यन्त्रिणा है। सम
 रूप्य होता है कि तार्किक का यन्त्रिणा शिक्षित है। समता सामान्य और
 विज्ञान में उत्पन्न मान्यताया यन्त्रिणा व रूप में हम नहीं समझना चाहिये।
 सम यन्त्रिणा का अर्थ अतः यन्त्रिणा अर्थात् यन्त्रिणा का अर्थ समता व समता में
 बाहरी समता या अर्थात् अर्थात् तत्त्व होता है। सम शब्द में यन्त्रिणा मच्च
 यन्त्रिणा का प्राप्त करना।



सम यन्त्रिणा व यन्त्रिणा तम स्वर मानता है—साध्य (aesthetic)
 नतिर (ethical) और धार्मिक (religious) साध्य स्तर में मनुष्य वचने के
 समान जावन यन्त्रिणा करता है। वह मुख्य दुःख व क्षणा में जाविन रहता है।
 साध्य वस्तु और भावता में मच्च इन रहता है। वह भावना के स्तर पर
 जितना रहता है। समक तम काद भी वस्तु धान्ययक है या त्व लायक है।
 सागा ध्यति ववल मुख्य लक्षणा में रहता सम करता है अर्थात् अर्थात् मुख्य
 या समता परम त्व लक्षणा है। साग विज्ञा धारा में एपीक्यूगिनिम इसी
 प्रकार या जावन लक्षणा है। तार्किक मानता है कि सागी यन्त्रिणा अतः
 निराला व अतः लक्षणा है। सम मुख्य या परिस्थितिया में भी त्व की अनु
 भूति सागी "तुग या अतः लक्षणा है। समता सागी व्यति ऊर (bore
 dom) में यन्त्रिणा व तम अपन विषया में परिवर्तन करता रहता है। वह पूरी
 तरह न मौनित स्तर पर जावन यन्त्रिणा करता है। तार्किक सम भाग्य स्तर
 में तम बहुत नवीन अर्थ भी लक्षणा है। सम अनुसार विचारतम तार्किक
 या बौद्धि भी सम स्तर पर जाविन लक्षणा है। बौद्धि यन्त्रिणा विषया का
 निगता में लक्षणा है।

सागी तावा का स्तर न हस्तिताण वनी भी पूरा नया होता क्वानि
 व समता लक्षणा स्तर पर जाविन लक्षणा है। समता मान्य यह तम है कि
 तार्किक सम अतः लक्षणा का पूरा तम लक्षणा साध्य मानता है। वह यन्त्रिणा चाहता
 है कि यन्त्रिणा जावन की लक्षणा अर्थात् लक्षणा का लक्षणा न है। यन्त्रिणा अतः
 लक्षणा या समता या तम अतः लक्षणा है। तम यन्त्रिणा सम स्तर पर लक्षणा

मनुष्य के पूरे जीवन और पूरा प्रवृत्ति का परिवर्तन न जाना। काकेंगा-
 रसना योराप की नगई या त्रिष्व युद्ध म भी अविन भयानक और हृदय का
 रोदन वाली घटना मानता है। क्योंकि उसके कारण मनुष्य के मन के विश्व
 म गहरी से आघातन उत्पन्न होता है। धार्मिक बनन का अर्थ या त्रिष्वयन
 होने का अर्थ सच्चे अस्तित्व के आधान म प्रभावित होना है और समा प्रसार
 की निम्नतायिका के साथ साथ करना है। उस स्तर पर माय माय त्याग और
 नान प्राप्ति के दो काम मनुष्य को करने पड़ते हैं। सच्चा अस्तित्व अन्तर म
 छिपा हुआ है जबकि सामान्य स्थिति स्थूल है प्रकट है। इस सामान्य स्थिति
 का सम्बन्ध पूर्व विवर्चन भाग्य और नतिक स्तर स है। धार्मिक ध्यान म उस
 स्तर स्थूल स्थिति का त्याग करना पड़ता है और मन म छिपे हुए सच्चे
 अस्तित्व का प्रकट करना पड़ता है। इसीलिए उसमें हमारा एक प्रकार का
 तनाव रहता है। काकेंगा-रसना के नि यद्वा मनुष्य की अन्तर्मुखता है सत्य
 जकिर्गिरी है। काकेंगा-रसना अनुसार इश्वर का क्या रूप म आन्तरिक स्थिति
 है। यद्वा एक बात और ध्यान म जान घाय है कि कीर्तेंगा-रसना भाग्य और नतिक
 स्तर का उग रूप म त्याग नहीं समझता है जिस रूप म एक भारतीय
 गायमा या मन त्याग समझता है। कीर्तेंगा-रसना अनुसार इन दोनों स्तरों
 का धार्मिक स्तर के अन्तर्गत जान पड़ता है। इसलिए प्रत्येक क्षण इन स्तरों
 के द्वारा के कारण उस रुचिकता और निराशा का सामना करना पड़ता है।
 अतः धार्मिक स्तर पर यन्त्रि का अपन निगम का प्रत्येक क्षण पुनर्जीविन
 करना पड़ता रहता है। पुनर्जीविन का अर्थ है श्वर के सामने बार बार अपने
 आप को प्रार्थना करना। वह अपने अस्तित्व म जा लिया जा तुला उस
 दूर कर देता है और जिन वस्तुओं का वह पद छोड़ देता है उनका वह फिर
 प्रार्थना करता है और फिर स्वित्प्रन स्थिति प्राप्त कर लेता है पर यद्वा हर
 क्षण करना पड़ता है। यह क्षण उस स्वित्प्रन बनना पड़ता है। उस तरफ
 वह वर्ण करने का अनन्त करना रहता है। यह एक नियम हो जाता है।

यद्वा काकेंगा-रसना त्रिष्वयन जान का अर्थ है यह जानना भी आप
 प्रकट है। त्रिष्वयन जान का अर्थ है भगवान के सम्मुख युद्ध मात्र म अपने
 मात्र रूप म या अन्तर्भव करना कि भगवान किता भा प्रकार वस्तुपरक
 मिद्वन्ता के साथ अविन नग है अथवा त्रिष्वयन जान का अर्थ है व्यक्तिगत
 स्तर पर धर्म का अनुभव करना और भगवान का भा मिद्वन्ता के रूप म न
 रहने पर गताय स्थिति के रूप म स्थापित करना। वस्तु त्रिष्वयन समाज

म नम नन म रा चच म नान म न का ज्ञानि त्रिचिचयन नन न आता ।
 नमनिय त्रिचिचयन नान का मननव मानव नना अथान मजाव मियि का
 अनुमन करना उनव अनुमान राय करना है । मम्यागन धम और धम विषयन
 मिद्वान्न म उन धम का बना विचार है । कार्रोगा ममूह धम म विश्वास नन
 करना और धम क उत्रक पन म भी विश्वास नन करना । कीर्त्तगाद क जावन
 की मय ममम्या यहा = नमा म कार्रोगा का पूरा विचार-नय धूमता रहा है ।
 कार्रोगा न अपना पुनव Concluding an cientific post script म ना
 दिवचन किया है वह दिवचन कार्रोगा क पूर दार्शनिक दृष्टिकान का प्रति
 निमित्त करता है । नम पुनव म प्रव्यापित उनका मायनाया का मयाप म
 नम नम प्रकार नव मकन है—

- (१) मववा मारभूत ज्ञान अमिद्व म ममयचिन हाता है और ववन
 यन ज्ञान निमका अमिद्व म मारभूत मवय = मारभूत ज्ञान है ।
 नमका अय है कि अमिद्व का मारणा मारभूत ज्ञान नहीं है मजीव
 अमिद्व म मवयिन नय-पत्रनि का ना न मववा मारभूत
 ज्ञान (essential knowledge) है ।
- (२) वह पूरा ज्ञान जिमना मयय अमिद्व म नन = और ना ववन
 दिषाण पर आधिन है अमारभूत ज्ञान है ।
- (३) वस्तुपर विचार और ज्ञान का आमपक्क विचार और ज्ञान म
 अना ममभता चाहिय । वस्तुपर विचार विषय म अमन वस्तु
 पर मय (objective truth) का आर ल जाता = । (जम
 गणिन ज्ञान और ननिहाम का ज्ञान) नम तरह नय नय म अमिद्व
 का पूरी तर अकनना जाता है । व अमिद्व क प्रति उतामान
 रता है ।
- (४) वस्तुपर विचार वजन की पद्धति वस्तुपर तथ्य क प्रति समुद्व
 है जत्रि अन्तर और आतरि मय क प्रति वह उतामान रहता
 है । फवन य वस्तुपरता ववन पर धारणा माय जाता है नव
 अमिद्व ना निमप नन करना ।
- (५) आतरि ज्ञान म अनिपन आतममाकरण (appropriation)
 आतरि है । आतरि विचार म अमिद्व आममातरि नय में
 अता = । नमनिय यन अमिद्व का ज्ञान ननि का मवीय

म नाम लन म या खच म जान स ने कोई यदि विशिचयन नहा हा जाता । इसलिये विशिचयन हान का मतलब मानव ज्ञाना अर्थात् सजाय स्थिति वा अनुमय करना उसके अनुसार काय करना है । सम्प्रगत धम और धम विषयन सिद्धांत म उक्त धम का क्या विराध है । कीर्त्तोगान् समूह धम म विश्वास नहा करना और धम क वचन पत्र म भी विश्वास नहा करता । कीर्त्तोगान् व जीवन की मुख्य समस्या यही है "सी म कीर्त्तोगान् का पूरा विचार तत्र धूमना रहा है । कीर्त्तोगान् ने अपनी पुस्तक Concluding unscientific postscript म ज्ञा विरचन किया है वह विरचन कीर्त्तोगान् के पूरे दार्शनिक दृष्टिकोण का प्रति निधित्व करता है । उस पुस्तक म प्रस्थापित उनका मायतामा का संक्षेप म हम उस प्रकार रूप सकते :-

- (१) सच्चा साम्भूत ज्ञान अस्तित्व में सम्बन्धित हुआ है और बसल बनी ज्ञान जिनका अस्तित्व । साम्भूत मय व न साम्भूत ज्ञान है । ज्ञाना अर्थ है कि अस्तित्व की धारणा सारभूत ज्ञान नहीं है, सजीव अस्तित्व म सर्वात्मन कि न्य पद्धति का ज्ञान ही सच्चा सारभूत ज्ञान (essential knowledge) है ।
- (२) वह पूरा ज्ञान जिनका मय अस्तित्व से नहीं है और जा केयन विचारों पर आश्रित है असारभूत ज्ञान है ।
- (३) वस्तुपरक विचार और ज्ञान को आत्मपरक विचार और ज्ञान से अलग समझना चाहिये । वस्तुपरक विचार विषय से अभूत वस्तु परक सत्य (objective truth) की ओर न जाता है । (जस गणित ज्ञान और गतिहाम का ज्ञान) जस तरह हम ज्ञान म अस्तित्व का पूरी तरह अग्रहण होती है । वह अस्तित्व व प्रति उदासीन रहता है ।
- (४) वस्तुपरक विचार करने की पद्धति वस्तुपरक तथ्य के प्रति बन्धुग है जसकि अन्तर और आन्तरिक मय के प्रति वह उदासीन रहती है । फलन यह वस्तुपरकता बसल पर धारणा माय ज्ञान है मय अस्तित्व का निर्माण नहा करना ।
- (५) आन्तरिक ज्ञान म यतिजन आत्ममात्सरण (appropriation) आश्रय है । आन्तरिक विचार म अस्तित्व आत्ममात्सरण म आना है । जगतीय अर्थन अस्तित्व का ज्ञान यति का स्वीय

अस्तित्ववादी माने का एक विशेष मात्र समझें। 'मया सम्पन्न उम विचार
 युक्त म' है 'तथा विशेष अपने विचार में engaged होता है। विचार ही
 अस्तित्ववादी के लिये आवश्यक नहीं है। एक ही विचार जाना आवश्यक है।
 व्यक्ति का अपने विचार का जानना पड़ता है उम अपने विचार का सामना
 करना पड़ता है अर्थात् विचार का अपना बनना पड़ता है 'म तब' कि यह
 आत्मिक विचार पूरी तरह में एक प्रक्रिया में जाय था का प्राप्ति के लिये
 में रहित जानने विचार मात्र है। यही अस्तित्व है।

अस्तित्व का ज्ञान फिर सामने माना है कि आत्मिक अस्तित्व क्या है ?
 कीर्तन का अस्तित्व में क्या है ? क्या उसका एक मित्रात्मक है कि अस्तित्व
 आत्मिक है अर्थात् जाना जाना है ? कीर्तन अस्तित्व का एक अर्थ है। नही
 होता है कि अस्तित्व अस्तित्व में है ? जो अस्तित्व में है। मनुष्य कीर्तन का
 अस्तित्व का एक है कि एक ही आत्मिक भाषा में प्रत्यक्ष में प्रकट करने
 है। मैं अपने मित्र के प्रति सच्चा हूँ - 'मया' का है कि मैं अपना मित्र के प्रति
 सच्चा हूँ। अस्तित्व कीर्तन का अस्तित्व अर्थात् का सच्चा अर्थ है अपने
 प्रति 'मान्यता' है। 'म' का म का अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व है।
 मनुष्य का अस्तित्व । यह सच्चाई के लिये सम्प्रति 'अस्तित्व' की मन्त्र
 'अस्तित्व' अस्तित्व नही है अस्तित्व अस्तित्व अस्तित्व के प्रति सम्प्रति अस्तित्व
 का 'मान्यता' है। स्पष्ट है कि कीर्तन अस्तित्व का अस्तित्व मया अस्तित्व
 करता है।

यह एक विचार करें कि कीर्तन का अस्तित्व न जाना है मन्त्र में कीर्तन
 कीर्तन जान लगी है का उपयोग है। कीर्तन का अपने युग का का विचार
 किया था कि मनुष्य मनुष्य का समस्या का चित्रण किया गया था का
 मान भी था की वही वही हूँ है। अस्तित्व का वही वही है। अस्तित्व
 में अस्तित्व कीर्तन विचार अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व
 और आत्मिक अस्तित्व मया की अस्तित्व की अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व
 का अस्तित्व का अस्तित्व मया अस्तित्व बनता जा रहा है। अस्तित्व अस्तित्व
 का अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व है। अस्तित्व अस्तित्व अस्तित्व की अस्तित्व का
 कीर्तन का जो अस्तित्व अस्तित्व अस्तित्व है वह अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व
 पूरा है। जो जो अस्तित्व अस्तित्व अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व है कि
 अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व का अस्तित्व

कार्ल यास्पर्स

(Karl Jaspers)

याम्पर्स आधुनिक जर्मित्ववाद का जनक है। याम्पर्स का जीवन बहुविध रहा है। उसने गुरुभान में कानून का अध्ययन किया। फिर तान वप नर चिकित्सा विज्ञान में अध्ययन में परधान एवं मनोरोग औपचारिक में सहायक रहा। १९१२ में मनोविज्ञान में प्राध्यापक हो गया। और तब से वह निरन्तर के दान में ही श्रम में आचार्य के रूप में कार्य कर रहा है। याम्पर्स के ज्ञान में अतिरिक्त मनोवैज्ञानिक विश्लेषण अतिव प्राप्ति दाना है। वह असाधारण (abnormal) प्रकृतियों के वर्णन में बड़ा रहता है।

याम्पर्स ने भा-कार्सेगाल के समान अनेक युगों का मानववाद तथा का निरूपण किया है। अपना प्रसिद्ध पुस्तक *Man in the Modern World* में यह आधुनिक परिदृश्य मनुष्य की स्थिति और उसकी समस्या का बड़ा सटीक वर्णन करता है। याम्पर्स की समस्या कुछ कुछ कार्सेगाल द्वारा चित्रित समस्या से भिन्न होती है। समस्या मात्र भा-विच्छिन्नता और अलगाव (alienation) का है। इस समस्या का मूल कारण तकनीकी युक्तियों की सहायता से याजित उत्पादन (planned production) में जनसाधारण की समाहिता है। जनसाधारण भी याजित उत्पादन का अंग या घटक बनना आ रहा है। मनुष्य आधुनिक राज्य की सहायता का एक पुत्र बन जाना के मनरे में है और इस प्रकार यह अनेक सार आत्मा और आध्यात्मिक चरित्र में च्युत हो रहा है। अथवा इस पूजन भूत रहा है। मगर भी मनुष्य व्यक्ति की जगह समूह व्यक्ति (mass man) बनना आ रहा है। वह अपना सामाजिक जीवन का छात्रक सामाजिक सामाजिक जीवन का मिता रहा है। वह राज्य के माध्यम के रूप में

स प्रेरणा प्राप्त करने रहे हैं। क्योंकि कार्कण अन्तर्गत विद्वत्ता आधुनिक सिनियर का ही भावनात्मक चित्रण करना है।

कार्कण के दान में वस्तुपरकता में पूर्ण प्रतिगामिता है। उस वस्तुपरक सत्य के अस्तित्व के बारे में हाथ शरा पदा की गई है। यह बात बुद्धि विरागी निम्नादि देती है। इसलिए ग्राह्य नहीं है। क्योंकि वस्तुपरक अस्तित्व अपने क्षण में कायशील रहता है और इसकी आवश्यकता हम स्थापित करना चाहिये। धनानिक दान में वस्तुपरक सत्य का प्राप्ति करने का गुण है। धनानिक निष्पत्ति और धनानिक गाविष्कार का हम पूरी तरह से छात्र नहीं सकते। इसी प्रकार बुद्धि का भी हम निरन्तर नहीं कर सकते क्योंकि बुद्धि हम व्यवस्था देती है। बुद्धिमानता आवश्यक ही उत्पन्न करेगा जिसका अर्थ होगा मनुष्य सामाजिक न रहकर पूरा तरह से व्यक्तिगत प्रवृत्तियों के आधार पर जाति रहने लगता। एक प्रकार की अराजकता उत्पन्न होगा। हम तरह कार्कण का दान समान के सत्य में आता अनुयायी बनता है।

कार्ल यास्पर्स

(Karl Jaspers)

याम्पर्स आधुनिक जर्मन-दार्शनिक का जनक है। याम्पर्स का जीवन बहुविध रहा है। उसने शुद्धज्ञान में वादून का अध्ययन किया। फिर तीन वर्ष तक चिकित्सा विज्ञान व अध्ययन व पढ़ावन तक मनोरोग औपचारिक में रहा। १९१३ में मनोविज्ञान में 'याम्पर्स' का नाम रखा गया। और तब से वह शिक्षण व दाय में ही अपने वैयक्तिक व वैयक्तिक में कार्य कर रहा है। याम्पर्स का दार्शनिक मानविकतावादी विश्लेषण अविश्व प्राप्त होता है। वह असाधारण (abnormal) प्रकृति व वर्णन में बजाड रहा है।

याम्पर्स ने मा कीर्तना व समान धर्म युग की मानवीय दशा का निम्नान किया है। अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'Man in the Modern World' में वह आधुनिक परिवर्तन मनुष्य की स्थिति और उसका समस्या का वर्णन करती है। याम्पर्स का समस्या कुछ कुछ कीर्तना द्वारा चित्रित समस्या से भिन्न होता है। समस्या आज भी-विच्छिन्नता और अलगाव (alienation) की है। हम समस्या का मूल कारण तकनीकी-उत्पत्ति की सहायता में याजित उत्पादन (planned production) में जनसाधारण की सहायिता है। जनसाधारण भी याजित उत्पादन का अर्थ या यत्र बनना जा रहा है। मनुष्य आधुनिक राज्य की मशीन का एक घूर्णन बन जान के सन्दर्भ में और इस प्रकार वह अपने मूल आत्मा और आध्यात्मिक बल में खूब हा रहा है। अथवा हम पूरा भूत रहा है। मनुष्य प्रकृति की जड़ मनुष्य व्यक्ति (mass man) बनता जा रहा है। वह अपने प्रामाणिक जीवन का दायर प्रामाणिक सामान्य जीवन का बिना रहा है। वह राज्य व माध्यम व रूप में

या स्यान्ति-य यह है जा तन्नास्ति-य नहीं है । इस कृति धारणा का सरल-तन्नास्ति हम या कर सकते हैं । तन्नास्ति-य वह अस्तित्व है जा वही = अर्थात् जा प्रत्यक्ष है निम्न निम्न मनुष्य की चेतना नहीं वही निम्न जिम्न मनुष्य या भाग उम या उमर द्वारा होता है । यह अनुभवगम्य (empirical) अस्तित्व है । अपनी भविष्य व निम्न अस्तित्व म समझ सकते हैं । अस्तित्व-यत्न या एक स्व भौतिक प्रकृति (physical or natural world) - ठाम-य किन्तु परिवर्तन और परिवर्तन म मा म । य अस्तित्व-यत्न य तथा स्वयं व भौतिक नियम मय प्रकृति प्रकृति-वायव्य परम्परा आ-म पूज्य यह है । कुछ ज्ञान मयवा ज्ञान नियम = जा इसकी स्थिति गति और प्रकृति व निम्न उत्तराया है । य हम मक्षान म मनुष्य का भौतिक परिवर्तन कह सकते हैं । यक्ति का शारीरिक अस्तित्व सामाजिक परिवर्तन और मानसिक प्रदाय (psychio givenness) म तन्नास्ति-य का दूसरा प्रकार परिवर्तित किया जा सकता है । मनुष्य निम्न विषय य विषय समान विषय परिवार और विषय य म ज्ञान यता है । उम एक विषय आकृति वाता शरीर प्राप्त होता है । य शरीर मे मध्यम अन्त शारीरिक और मानसिक तत्व (psychio elements) उम अनायास और अनिच्छित रूप म ग्रहण कर सकते हैं । यह यन मय वस्तुवा का साक्ष्य य नो यता । मा वाय दश और स्वभाव या बुनाव करन का स्वतन्त्रता उममे यम अवस्था म नहा है । यह ज्ञानात अस्तित्व है । यम व समय य तम है । अत तन्नास्ति-य है ।

यम तन्नास्ति म मनुष्य या शरीर य हान व वाग्य एक प्रकार म तन्नास्ति-य है । वह तन्नास्ति-य यत्न है यमका अर्थ वस्तुवा म मध्यम ज्ञान है और उन पर आश्रित यी है । किन्तु मा व उममे यह नहा है । उममे कुछ ज्ञान है जा यन सारा अतिशय यत्न है और अपना स्वतन्त्र मत्ता का निम्न करता है । यत्न यम आत्मा (self) या आत्म चेतना कहता है । इसका प्रमुख धर्म है स्वतन्त्रता । यम स्वतन्त्रता या मनन तन्नास्ति-य का वाय कारण व यम का यन यत्न न । है बल्कि यम वाय-वाग्य यत्न म रहन य अर्थात् यमका मानन हूँ यम वाय का साक्षात्कार करन है यि मैं मानसिक मयवा शारीरिक या भौतिक वाय-वाग्य म ज्ञान हूँ या यमका अनिश्चय कर सकते हैं । मैं कवन वाय कारण का यत्न य नहा है । उमका यम

[illegible]

“म तन्न म मनुष्य मा भगव न्न चान न वारण त्व प्रसार म तथा
 सिद्धे ।” वह ज्ञातिस्त्रि म गता है “महा अप बन्धुमा म सम्पद ताता
 है श्री उत पर आश्रित भा है । फिर भा व उनम बद्ध रहा है । समय कुछ
 गया है जा “न मद्रवा अतिभय करता है श्री अपना स्वतः सत्ता का निपात
 करता है । याप्यम म् आत्मा (self) मा आत्म चेतना कहता है । इसका
 प्रमुख धर्म है स्वतंत्रता । म् स्वतंत्रता का भवन न्यास्तित्व व वाय कारण
 व धर्म का यजन करना नहीं है बल्कि हम वाय-कारण द्वारा म रत्न हुए
 धर्मात् स्वतः मानने हुए म् वाय का साक्षात् करण करना = कि मैं मानसिक
 मथरा प्राकृतिक या नीतिक वाय कारण म जान म् ना इसका अनिवार्य
 कर महाराज । मैं वरन वाय-कारण रा दूखता ना नहीं हूँ । दूसरे शब्दा म

पान्त यन् अधिगमनिमित्तं प्रत्यक्षं और आत्म-तत्त्वं (subjective) बन जाता ॥^४

•

मनुष्य चरम मय (absolute reality) की प्राप्ति करना चाहता है जिसे कि उमर-पावन का ममुरता परिवर्तनशास्त्रात्वा प्रतिष्ठिता मध्य आदि अनुपस्थित या जाये और एक प्राप्ति और आत्म-तुम्हिले यन् पान्त ॥ ॥ स चरम मय की प्राप्ति का एक तरीका विज्ञान है । विज्ञान वस्तुपरक यथाय का अध्ययन करता है और विज्ञान प्रमाणात् द्वि अनुभवमध्य पान्त को ही मय का आधार मानकर समस्त मनुष्य-यथाय अध्ययन यत्र का वस्तुपरक विज्ञानकड यथाय गोजनता चाहती है । याम्यम प्राचान दाशनिष्ठा की तरह विज्ञान का अध्ययन नया करता किन्तु उमकी समाप्त बताना है । विज्ञान अनुभवमध्य जगत् का अध्ययन मयता से कर सकता है यथाय वन् तन्मास्तिर या आशिक वस्तुपरक मय (objective reality) प्राप्त कर सकता है । वर वस्तुकी समझता का नहीं पकड़ सकता । क्योंकि विज्ञान दाह्य प्रस्तित्व (वस्तु) से अध्ययन-तु करता है और तन्मास्तिर निष्कर्षों के आधार पर सामान्यकरण (generalisation) और सावधानीकरण (universalisation) की प्रक्रिया का अपनाता । फलतः अस्तित्व का मानविज्ञान पर (चेतना-आदि) का मय यत्र से अध्ययन अनुपस्थित ॥ ॥ मय अनिर्विकल्प विज्ञान की विद्यमान वस्तुनि मय शाय (probable) तर मय पकड़ जाता है । मय विज्ञान के निम्नवत् अनुभव होता म अनिर्विकल्प दा हास । मय निष्कर्षों के आधार पर सम्पूर्ण विश्व का का मयनियुक्त रूप नया प्रताया म करता । यथाय विज्ञान की विभिन्न शाखाय मय मय का उपनयन करता है । मानवीय पावन मय-प्रती विज्ञान पायाय ता वजन माय है और अनुपस्थित है । मय मानव-जातन की विद्यमान सत्ता (active existence) के लिए कोई स्थान नया है । मय तरत मानव जीवन मय-प्रती विज्ञान कभी भा पूजन सातक अस्मिन्-ज का वस्तुपरक यथाय (objective reality) नया पान्त करता । विज्ञान

* तन्मास्तिर मय-प्रती और मय-प्रती का विचार करन मय मय मय भारतीय दान-व चरम धात्मा और परमात्मा के प्रत्यय मन में पायन हास है । किन्तु मय मय न मय-प्रती जिसे विचारमय विचार-तान विचार और मय-प्रती का मय मय मय है ।

अतिरिक्त चेतना को प्रमुख विषय बनाकर अध्ययन करना चाहता है। वह प्रयोगशाला में कम कर कमाल सार या सूत्र (formula) निरूपण चाहता है। यह काफी साहसपूर्ण आशय है जो सत्य माना जा रहा है।

विज्ञान एक स्तर की सावधानी (universality) अवश्य प्राप्त करना है पर वह सृष्टि का एकता और पूर्णता नहीं पा सकता। वह अनुभव जगत का सामित है। इसलिए हम वस्तु तक सीमित रह कर दार्शनिक दृष्टि में कार्य करना चाहिए। स्पष्ट है कि विज्ञान यदि अपना सीमापार को स्वीकार कर लेता है तो वह अज्ञानाभिमुख हो जाएगा। विज्ञान और विज्ञान में ही एक विरोध है वह नष्ट हो जायेगा। और हम प्रकृत विज्ञान दोनों के बिना एक आवश्यक आधार का काम करेगा। तू रि वास्तविक विज्ञान के विषय (object) (जो सीमा का) अस्तित्व मानता है अतः वह वैज्ञानिक नया और आविष्कार का उसका भावित्व मात्र के साथ स्वीकार करता है। उसके अनुसार ज्ञान विज्ञान से पुनः होता है। फलतः विज्ञान के बिना हमका काम नया बन सकता है। क्योंकि ज्ञान का मध्य के भाग जगत में है तो विज्ञान का साथ क्षेत्र है। दार्शनिक का भावनात्मिकता की सीमा का प्रतिनिधित्व करना है। अतः हम जानना है और तत्पश्चात् हम जानकारी का समर्थन हम उक्त अस्तित्व और स्वतन्त्रता का साथ प्रमाण करना है। वास्तविक विज्ञान का स्वरूप ज्ञान का परम्परागत विषय विषय है तो समाधान हम है। राष्ट्रवाद के समान तो विज्ञान का निर्माण नया करना और विषय का तो मरप्रमुखता मानना है अर्थात् परम्परागत परम्परा (idealism) का उक्त अस्तित्व है। दूसरा तर्क है विज्ञान जिन प्रकृतियों (naturalism) और अनुमान (intuition) का भावित्व करता है। क्योंकि उनमें धारणा या चेतना का मध्य के भाग है। ज्ञान का विद्वान (distort) दिया जाता है। हम तर्क के ज्ञान में एक मनुष्य स्थापित करता है।

उमका चेतना क प्रति प्रगति जानू है स्वास्तिव है । यह उम नियमबद्धता क स्थान पर स्वतन्त्रता प्राप्त जाता है वह पाता है कि उम प्रतिक्षण चुनना करना पड़ता है । जानन का अवकाश विभिन्न परिस्थितियाँ म उम अपनी राय बनाना पड़ता है और तन्नुसार कायगन जाना पड़ता है । उम अवसर पर मनुष्य 'बुद्ध न' है किंतु वह बुद्ध वा मनन है और उम बनना चाहिए न अनुमति करता है । यह मनन का निश्चय भा एक बार नहा हारा प्रत्यक्ष क्षण बनता परिस्थितियाँ क मन्त्र म स्वका पुननिर्माण किया जाता है । उम तर' चेतना उम काय म निम्नतर गतिमान और उमान भगना हूँ रहता है । अर्थात् यह निमा परिस्थिति और निश्चय म बद्ध रण पड़ता है । यह पूणत स्वतन्त्र अर्थात् गतात ह । अर्थात् स्वास्तिव न चेतना भूत रूप म पूण स्वतन्त्रता और एकात्मता का चेतना न है । उम चेतना क जाग्रत गत न 'प्रति का मवम पड़ता अनुमति क जाना है कि मैं स्वतन्त्रता (प्रवृत्ति प्रति) नागरिक (उम समाज प्रति) निमा (मनन विषय विधिनियमात्मक काल प्रति) और चरित्र (character) हा न' ह । मैं स्वतन्त्र, उमय वषा उभा न' ह । जब तक यह अनुमति नहीं जाना तब तक व्यक्ति तन्नास्तिव हा पड़ता है । यह स्वतन्त्रतापात अत्यंत (anguish) और आत्मा (ibmali) -त्यंत बनता है । अर्थात् उम उम व्यक्ति का ठाम आधार तन्नास्तिव (being there) पीछे गूट जाता है अर्थात् व्यक्ति क सम्पूर्ण पता म क उम उम उम जाना है । उम उमता है कि यह स्वतन्त्रता न' है और उम नी उम मार (e scene) की चेतना है ।

जब व्यक्ति उम चेतना क द्वारा नियम पड़ता है और प्रतिनात होता है ता उमरा य' चुनना काय पूरा तर' म अस्तिवगन और निरपम जाना है । उम चुनना का का भी अनावगति नतिव अथवा यथागति (ideal) कारण न' हूँ जा सकता है । यह चुनना पूणत स्वतन्त्र और निमा अथ आधार क चेतना पता है । अर्थात् यथागति उम स्वयं न' मय क प्रति भूट मानता है । मय है कि यथागति उम चेतना यापार का- उम काज जानि परिवार अनावगति नतिव- उम मय भूत मानता है । उम स्वीकारता है कि उम मवका चुनना (choice) प्रति न' कर सकता है । फिर भी उम उम स्वीकारन या अनावगति म अस्तिव चुनना कर सकता है । उमका अथ यह है कि वह उम चेतना का आधार या आधार का उम म मानता है । चेतना क काय का उम सपष होता अनावगति है । उम

निराशा भी मुनिश्चिन् ३ । पर यास्यम निराश द्वार बठ जाने यस्या नियन्त्रा १ या भाग्यवाणी हान के पक्ष म नहा ३ । गभीर निराशा म हा उनके अनुनार स्यन्त्रास्मिन्त्य म मा तत्कार हाना ह । शक्ति निराशा १ स्थिति म ही यक्ति म्मात और आत्मनिमर हाना ३ अर्थात् स्वयं हाना ३ । नस तरह निराशा स्वास्तिस्व प्राप्त यक्ति की चेना का बाधनी नही पवन धूनी है और उसकी स्वयं उगान के नीचे रह पीछे पूरा गानी है ।

[illegible]

मन्त्र्य मन्त्रा ३ अथात् व मन्त्र धृत्वा धीर मामिन् (मित्) ३ । एव
मन्त्रा मन्त्राणा व कर्त्तव्य । उन मामावित्र आवित्र या राजनानि मन्त्रो
म नाम उन मन्त्रा ३ अथ कर्त्तव्य कर्त्तव्य वन्ता ३ । य मन्त्रावित्र हार वा

का चुनाव अपराधीमान (guilt) उत्पन्न करता है। क्योंकि चुनाव करत ही वह बहुतेसी श्रय चीजों अथ सम्बन्धों, अथ रास्तों और अथ शिखरों से अलग (exclusion) होता है। इस तरह हर सम्बन्ध (relation) का चुनाव किया अथ सम्बन्ध का समाप्तिता व मूल्य पर हाता है। मैं ऐसा भी कर सकता था' श्रयवा मैं ऐसा क्या नहीं करूँ व तनाव से अपराध भावना उपजती है। यह मनुष्य की स्वतन्त्रता के लिए दूसरा सीमा परिस्थिति है जो चीजों व स्वतन्त्रताय से बाधित करती है। याम्पस इस अपराध भावना को अ निवारण मानता है किन्तु इसे अनिवार्य व घन नहीं स्वीकार करता। यक्ति को अपनी प्रामाणिकता का अथान् स्वतन्त्रता का रक्षा के लिए इस अपराध का उत्तरदायित्व वहन करना चाहिए। माधारणतः जगत् दूसरों का या परिस्थितियों का दाप दकर इस अपराध में मूल्य हाता चारत है। यह अप्रामाणिक जीवन है। क्योंकि जब हम द्वारा व दुःख या अपराध का दूसरा व मूल्य मन्ते ही नहीं उसका निराकरण की जिम्मेदारी भी उन्हीं की मानते हैं। अपराध का उत्तरदायित्व यह है अपराध निवारण का कर्त्तव्य भी उसी व्यक्ति का हो जाता है। इस प्रकार स्वतन्त्रताय के लिए अपराध बाधक की उद्दीपक है।

मनुष्य की दूसरी सामा परिस्थिति का कारण यह है किम इतिहास (history) कहा जाता है । मात्स्य के अनुमान स्नास्तित्व अथवा चेतना इति गानीत नही है । पू कि मनुष्य का मस्तिष्क मावशीम और साजनानिक (universal) नही है स्नास्तित्व यह इतिगमन मा इतिगमनवद है । य इतिगमनता मा इतिगमनता प्राप्ति र इति अथराव-भावता प्राप्ति क समान आवश्यक है । मनुष्य पुणन तत्रास्तित्व म म्मित है अत वह इतिगमन निरपक्ष नहा हा मकता । एक विज्ञाप दग और एक विशेष का म जनमता है और एक विज्ञाप गेग और गग विज्ञाप का म गह मर जाता है । य इति विज्ञाप (अर्थात् इतिगम) म मक्त नही जाना किन्तु य इति विज्ञाप म वद भी नहा हाता इति गग । घनिष्ठन मधुन हाता मग पाता और मकता क द्वारा मकता निर्माण मकता है । इस इतिगम की परिमोमा म तत्रास्तित्वमन गपाक राय यम व्यनितन मम्ब-अ प्राप्ति मय बुद्ध ममानि है । राय के प्रति मात्स्य के इतिगमन म इस बात का म म हा जा मकता है । राय व्यक्ति की स्वतंत्रता क इति आपारभूत है और साय ही माय यह उमगी स्वतंत्रता का बाचना मा है । राय क बाचना का इतिगमन करना सागरण इति र इति गग इति राय है । कपाकि राय व्यनितन

इतिहास (तथ्यान्तित्व) निरपेक्ष निवृत्तिपरक अतमुक्तता का सचाई में विश्वास करता है और न वस्तुवादी दार्शनिकों का पूर्ण प्रवृत्ति या वस्तुवाद (position) में। यह इन दोनों को अस्तित्ववादी रूप में समझित करता है।

•

हमारे में मध्य विधान का सम्प्रपण समस्या की मध्य अस्तित्ववादी की प्रमुख समस्या रहा है। यह समस्या कम ता काफ़ी पुराना है पर प्राधुनिक काल में वैज्ञानिक, धार्मिक, सैद्धांतिक और औद्योगिक उद्घातों के कारण यह और भी विकसित हो गई है। व्यक्ति अधिक से अधिक सकीर्ण और कीकेंगाद की माया में स्वबद्ध (shut up) होता जा रहा है। मास्परस भी इस समस्या का समीक्षा में विवेचन करता है। उसके अनुसार स्वास्तित्व प्राप्त व्यक्ति का मध्य अस्तित्व प्राप्त व्यक्तियों से सम्प्रेषण जाना अनिवार्य है। सम्प्रेषण (communication) को वह विविध अर्थ में प्रयुक्त करता है। इस सम्प्रेषण में दोनों की (स्वयं की और दूसरे की) अस्तित्व और स्वतंत्रता सम्प्रभावित रहती है इनका परस्पर स्वाहति आवश्यक है। इस आधार पर दोनों में सम्बंध विधान होता चाहिए। यह कस समय हो सकता है? मास्परस का उत्तर है मैं यह अभिप्राय करता हूँ प्रत्येक दूसरा मा-मैं जो कुछ जाना चाहता हूँ-कस ही वह भी कुछ पूर्ण ईमानदारी और सम्बद्ध के साथ होगा। स्पष्ट है कि यहाँ पराधिकार नहीं स्वाधिकार और आधिकार दोनों की पहचान और स्वीकरण आवश्यक है। अतः सम्प्रेषण के लिए रानिगिजार्ज धारणाएँ सास्कार मान्यता धर्म आदि के बचन से मुक्ति जानी चाहिए और व्यक्ति को दूसरे के सामने अपने मा-मैं के स्वयं से घाटा चाहिए। व्यक्ति में यह गुणात्मक (openness) जाना सम्प्रेषण के लिए आधारभूत है। हम तरह सम्प्रेषण सम्मान में गृहणीय नहीं है बिना एकाकी (singularity) प्रामाणिकता की पहचान और स्वाहति है। हम तरह यह सम्प्रेषण मध्य का रूप न सकता है पर मा-मैं मध्य (long struggle) होगा। क्योंकि इस मध्य में गुणात्मक होने के कारण मध्य तामनिक वृत्तियाँ (स्थायी आदि) नहीं आ सकती। यह सम्प्रेषण प्रत्येक व्यक्ति के रसास्मिर के एक नयान और समार रूप होता रहा। क्योंकि दूसरे का स्वास्तित्व इनके लिए सहायक (corrective) सिद्ध होगा। यह सम्प्रेषण मा-मैं के बीच के परिवर्तन में क्रियाशील रहता

है। बुद्धि से सम्प्रेषण नहीं हो सकता। क्योंकि बुद्धि में ही सत्ता से प्रारम्भ होती है और तू को वस्तुरूप (object) दे देता है। उसकी चेतन सत्ता की गतितीयता को अस्वीकृत करने का प्रयास करती है या उसे विकृत (distort) करती है। कच्चा प्रेम ही जो विस्तार की परम चेतना या भूमा है— उस सम्प्रेषण का आधार हो सकता है। स्पष्ट है कि यह प्रेम मवगुनभ सवन्तात्मक या भाव्यतापूर्ण नहीं है बल्कि उदारतापूर्ण सम्भाव है।



अथ स्वतन्त्रास्ति य (being in it elf) की ओर ध्यान दें। जसा कि पहले ही कहा जा चुका है स्वतन्त्रास्तित्व ही परिभाषा नहीं दी जा सकता उसे जाना नहीं जा सकता। य तो यह वस्तुनिष्ठ तान की पक्का म आता है और न प्रामाणिक मूल ही उसे छू सकता है। तो फिर उसकी सत्ता का प्रमाण क्या है ? माध्यम के अनुसार जगत् की अपूर्णता सामा और क्षण मगुरता ही स्वतन्त्रास्तित्व (पूर्णता समीमा और शाश्वतता) का प्रमाण है। हम उसी जगत् के माध्यम से उगरी लाज कर रहे हैं। उस पान या पकने का चेष्टा निरर्थक है।

माध्यम स्वतन्त्रास्तित्व की सत्ता की गिद्धि नति नति रूप में करना है। वस्तुनिष्ठ इति म हम प्रत्येक वस्तु की सीमा बाह्य गुणमात्रा आदि का विश्लेषण करने है और अन्त में पात है कि अंतिम सत्ता क्या नहीं है। निषेध के माध्यम से हम उन मय प्रमथा (categories) के पूर्व और अतीत रूप का विचार करने है अर्थात् अतिर गता (स्वतन्त्रास्तित्व) का मानन है। हम प्रकार प्रत्येक वस्तुगत धारणा का स्थापना कर उसका प्रमिषा या नक्षित करने का हम उसका निषेध करने है। परिणामस्वरूप हम स्वतन्त्रास्तित्व की भावा प्राप्त होता है। हमका पन यह होता है कि हम तन्त्रास्तित्व (जिसका माध्यम से स्वतन्त्रास्तित्व प्रकट होता है) और स्वतन्त्रास्तित्व में अंतर सम्भूत करने लगते हैं। स्पष्ट है कि यह स्वतन्त्रास्तित्व यद्यपि मय सीमित रूप में जाना या प्रतिबन्धगुण है तो भी यह सामा स्थितिवाक माध्यम से ही से जाना या अनुभूत किया जा सकता है। अनुभव का अति म यह धारण स्थिति स्वर है जो ममस्व अस्तित्व का आधार है। अतः अस्तित्वगत द्वय प्रत्यक्ष और अत्यन्त विनाश और मयत्र गनित्या का आधार भी क्या है। पता चल पावक है कि जना माध्यमा से हमका मोन का ताय। इन

दाना व तनाव को सम्भारने के लिए माहसमय-बद्धा (courageous faith) या 'नैतिक श्रद्धा' की अनिवार्यता है । *

स्वामित्व या स्वयं क्या सम्भव है ? स्वामित्व प्राप्त यक्ति स्वतंत्र होता है पर घातमनिभर नहीं होता । यह तत्त्वामित्व (सीमित वस्तु प्रपत्ति जगत् पर) आश्रित है क्योंकि उसी के माध्यम से उसका स्वामित्व जागत होता है । दूसरा और वह स्वतन्त्रास्तित्व पर भी आश्रित है क्योंकि उसका स्वतन्त्रता का आधार और निष्ठा स्वतन्त्रास्तित्व है । हमका यह भय हटा कि शक्ति (स्वामित्व) जगत् (तत्त्वामित्व) के माध्यम से ही अंतिम मत्ता (स्वतन्त्रास्तित्व) से सम्पन्न हो सकता है । यह जगत् माध्यम बन सकता है । यहाँ रहस्यवाद्या व सवात्मवाद और बचानिक वस्तुवाद में बचने और अपने मिश्रित का गुड़ दागना रूप में के लिए साम्यम विदु या कृत (cipher) का उत्प्रेरण होता है । जगत् या तत्त्वामित्व या तत्त्वम्बद्ध तत्त्वामित्व या तत्त्वमय मीमा घटना स्वतन्त्र चेतना (स्वामित्व) के लिए मिश्रित हैं । एक तरफ घटना रूप में स्थित हैं किन्तु दूसरी तरह प्रती वातमय रूप में घटनानीत स्वतन्त्रास्तित्व की ओर सक्त कर रहे होते हैं । व्यक्ति को इन बिन्दुओं का भय लगाना होता है । यह भय बुद्धिगत वस्तु निष्ठता में नहीं लग सकता क्योंकि विदु का प्रतीक बुद्धिगम्य नहीं है । विदु सामान्य प्रतीक नहीं है बल्कि स्वतन्त्र प्रमाणित है । सामान्य प्रतीक किसी दूसरी सामान्य घटना का व्यञ्जित करता है जिस प्रतीक-राम्य अर्थात् गौडिक शक्ति में पकड़ा जा सकता है । हमारा विदु का विचार ज्ञान में नहीं समझा जा सकता । हमका भय करने स्वतन्त्र विचार के माध्यम से ही गया जा सकता है । उसमें निहित स्वतन्त्रास्तित्व के मन्त्र का मन्त्र मन्त्रानुभूति (concrete intuition) में ही समझा जा सकता है । * य विदु मन्त्र 'यतियो व'

* श्रद्धा का माहसमय या 'नैतिक' विचारण भावना और पूर्वाग्रह की प्रयत्ना की शक्ति का धार धरत रहत हैं । श्रद्धा का सम्भार हमने के लिए निराशा का स्थिति में गुजरना पड़ता है जो सामान्य श्रद्धा का नष्ट कर सकता है ।

• I live with the ciphers I donot understand them but I steep
inve if in them All their truth lies in the concrete intuition
which fills them in a manner each time historical

निए अपना अर्थ देने है अर्थात् इनका योक्तव्य शून्य होता है। इनसे प्रतिरिक्त बिन्दु चूँकि इतिहासगत न घटित होते हैं अथवा इन्हें एक बिन्दु प्रतिम नहीं होता। फलतः एक बिन्दु का अर्थ उसी बिन्दु तक सीमित है। यास्तम कि इस बिन्दु की परिमिता न प्रकटित यापार इतिहासगतता अति प्रसिद्ध अर्थात् सब कुछ समाहित है। मेरा जीवन मेरा सबसे बड़ा बिन्दु है। जिसका अर्थ मुझे लोचना है—मही स्वतन्त्रता है। मेरी सफलताएँ निराशा कायं निराशा सब कुछ बिन्दु हैं जिनमें मैं स्वतन्त्रास्तित्व का अर्थ को छूता हूँ अनुभव करता हूँ। किन्तु यह अर्थ वस्तुगत (positive) है फलतः स्थिर है। अतः अन्तिम नहीं है।

(२) बिन्दु का द्वारा यास्तम क्या कहना चाहना है? मेरा अपना अनुमान है कि वह शायद भौतिक मानसिक समाजिक अर्थात् अनेक विध घटनाओं का वस्तुनिष्ठ जानकारी की सम्पूर्णता की अनुभावना बनाना है और फलतः उस सम्पूर्णता का प्रतिम सहजानुभूति का द्वारा कहना चाहना है। सहजानुभूति चूँकि व्यक्तिगत अनुभूति होता है अतः उसका साधनभीम बुद्धिबल अस्तित्व प्रमत्त है। अतः यह सम्पूर्णता व्यक्तिगत ही होगी। घटनाओं के अनेक विभिन्नता का कारण यही सहजानुभूति का अनेक और प्रसंग (सम्पूर्णता) की सीमिततावाचित्व भारी मात्र होती है।)

अन्तिम बिन्दु यास्तम का अनुसार पूर्णतः नकारात्मक (negative) है। अतः ज्ञानवान् विस्फोट है। * सम्भवतः वह ऐसा स्थिति है जहाँ कोई बिन्दु नहीं पता जाता और ऐसा कि मात्र न ही मान में सब बिन्दु परातिन चित्रित हैं। यह ज्ञानवान् विस्फोट पूर्णतः निराधार है। अन्तिम अन्तिम मत्ता (transcendence) का ध्यान का अर्थ परिणाम (approaches) टूट जाते हैं। अन्तिम का बुद्धिबल अर्थ को निर्मित करने के सब प्रयत्न घटनाओं में विफल होते हैं। और स्वास्तित्वगत स्वाध्याय का निराधार हो जाती है। धर्मिक विचारों का ध्यान और शून्य बन जाता है। यह ऐसा स्थिति है जहाँ अन्तिम का अन्तिम टूट जाता है और वह पूर्ण अन्तिम और निराधार में बन जाता है। काँसा या तापनिक और धर्मिक भाव उत्पन्न साधना नहीं कर सकता। अतः मात्र कुछ होना चाहिए पर कुछ सा नहीं होता—अन्तिम

* The ultimate is ship wreck The non being of all that is accessible to us that non being which reveals itself in ship-wreck the being of transcendence

धनीय मरणात्तः अस्मिन् का अनुभूति म स्वतन्त्रास्मिन् और म म अन्तर की अनुभूति जागता है । मर जाने म म स्वतन्त्रास्मिन् न उमका पूजा का अनुभव रता है । फलतः हम प्रभाव होता है कि सब मन्त्र धनुषों का धनित्व (non being) न न 'जन्मान विष्णु' र मण प्रकट (revel) जाता है अतिवर्धनीयता का धनित्व है । म न म 'यति' का स्वतन्त्रास्मिन् म मरुद गन व विष जन्मान विष्णु अर्थात् निरागा और शुद्धता र और म गुह्यता होता है और माय न माय म मात्ममय अन्त और भाषा का अभावता धनता है मव मायारि भाषाओं का स्थानता ना है मर म मा म मिति धनी जाता है, तब 'यति' म म नान प्रकार का अति म न जाता है जिनम हम स्वतन्त्रास्मिन् का अनुभव-ममयन (affirmation) व मवन है । उमम स्वतन्त्रास्मिन् है न म विराम न उमम । (मात्मम माय म 'गुह्य अनुभव' की स्थिति का अनुभूति द्वारा 'गुह्य ममूगता' की अनुभूति उत्पन्नता आता है । गुह्य न म की मर गुह्य ती 'यति' का धनित्व मनाविनाम-ममयन है ।)

ता क्या 'यति' म जन्मान विष्णु की वापता कर ? मात्मम माय का मृदु कायता सिद्धात का अन्वीयता करता है । 'यति' म विष्णु का हृदय का अर्थ परिधम करता है म मम मयय करता है और यह पञ्चानता भी है कि मम वचा न न जा भरता । काम व ममान मात्मम भी वाता है कि यति रान औरन मूय आि न निरवकाता रितामशीनता र नान नूत भा कायता (noble) र ।



उपर मम है कि यति व मव निगय या चुनाव का किम क्षणान्तर होती है । जन्मान विष्णु म र न रता जावन का एक भाग है । म विष मरिष्य है कि म मात्मम र क्षण मरुद विचारा का मा जानें । * क्षण माययि (temporal) और मात्मम (eternal) र ज्ञान धाना विरु है । म भागशः एकीकृतान् रमान म जावन-यावन' न न ममनता धानि । म यति व रान निगय मग मात्मम मय का उपस्थिति स

* मम म मा मर ना कि म म मात्मम म मात्मम क्षण किम मनामय रान है मर र मर मनामयता पर माधन है ।

भूत और भविष्य की वायता है। क्षणगत घटनाओं में शाश्वत अर्थ गमन नहीं रहता वह निश्चित या निमित्त किया जाता है। हमका अर्थ है कि 'व्यक्ति क्षणगत निणय का क्षण-स्थायी मानकर नहीं लेता बल्कि वह निणय शाश्वत और सत्त्व है उस रूप में लिया जाता है।' 'सा अर्थ में क्षण भूत (घटना या (temporal) और भविष्य (निणय या eternal) को जोड़ता है। उस तरह क्षण वह वर्तमान है जो शाश्वत अर्थवत्ता में अजित है (present charged with eternal significance)। स्पष्ट है कि यह 'क्षण प्रवहमान' का नैरन्तर्य (continuum) का एक कण है और तद्विस्तृत निणय उच्च बिन्दु हैं और एक निरन्तरता का निर्माण करते हैं। फलतः ये एक दूसरे से सम्बद्ध हैं एक परम्परा में श्रृंखलित हैं। इस रूप में ये निणय दैनिक जीवन के सम्पूर्ण विस्तार को प्रकाशित करते हैं। इस निणय प्रकाश के प्रति सजीव व्यक्तियों का अत्यन्त आवश्यक है। उनका अद्यतनमान रूढ़ि है यास्पस 'स तरह परम्परा का या भूत को त्याग नहीं मानता केवल मरान अनुभव के रस से उसे अनुमानित या ससृज करना चाहता है। निष्पन्न क्षण' एकत्र भोग नहीं हैं बल्कि वे परम्परा का यह बिन्दु है जो नवीन शाश्वत अर्थ की चेतना में परम्परा का पुनर्स्थापन करता है। यह भूत भविष्य विच्छिन्न नहीं उनका न्यायपूर्ण मांग है।



यास्पस का दृष्टान्त किता निश्चित मामा का मानकर नहीं चलता है। उसमें सब प्रकार को विचार धारणा का सम्मिश्रण है। उसका दृष्टान्त भी स्वयन्वात्मिक के समान सर्वव्यापी (all comprehensive) है। दूसरी विचार यह है कि यास्पस किसी भी बात का निश्चित नया मानना। (यद्यपि अपने समझन का अन्तिम क तिम अमन उसका निश्चित रूप का विधान किया है।) काँफे मा सिडोल्स या निष्पन्न उसका तिम अन्तिम नहीं है। अन्तिम उसकी आशयना कन्त दूत 'हैनमन (Heinemann) उम उन्नतशीत दार्शनिक (gliding or floating philosopher) का मन्ता लेता है। निश्चितता की प्राप्ति-निश्चित निष्पन्न या विचार' का मात्र-परिचित तार्किक (rational) पद्धति का रूप है। किन्तु यास्पस-जान में निश्चित मन की अर्थ रा रगता जम्पाना है। यास्पस विज्ञान का पश्चाद्भूमि में गुरु करता है और स्पष्ट करता है कि ज्ञान का उद्देश्य प्राप्त करना नया 'प्राप्त करना है। यह

तोत्र भी यत्किन्तु स्तर अर्थात् स्वातन्त्र्य धम के आधार पर होना है तथा अनुभूति रूप है। इसलिए 'मम' निश्चितता के बिना आवश्यक वस्तुपरक सावधोक्त्य' एवं सवसाधारण' साजना अस्थानीय है उस वस्तु का खोजना है जिसके बारे में हम जानते हैं कि वह वही नहीं है।

यास्पस की प्रमुख समस्याएँ सम्प्रेषण और स्वास्तित्व की रक्षा-आज भी वही हैं। सम्भवतः उनका रूप उग्रतर हो हुआ है। उस समस्या का समाधान भी—(जो कि वह पूरुष अस्तित्ववादी न होकर आध्यात्मिक—(meta physical) है) भविष्य में कारगर ज्ञान का समाधान में युक्त है। क्योंकि इसमें धर्म रहस्य विचार समाज विचार, विज्ञान आदि सब को पचा लिया गया है। मरु दृष्टि में निश्चित भविष्य में ही यास्पस-दर्शन का विकास और प्रचार होना चाहिए, शायद पश्चिम की आस्था पुर में हम काम के होने को समाधान प्रदान है।

मार्टिन हेडेगर

(Martin Heidegger)

हेडेगर सन्तान्तरिक दशक का अत्यन्त महत्वपूर्ण दार्शनिक है । उसका दशन न साम्यवादी देशों को छोड़कर यूरोप के अधिकांश दार्शनिकों को ही प्रभावित नहीं किया बल्कि गतिम अमेरिका अमेरिका और जर्मनी के विचारकों को भी किया है । उसका यह प्रभाव दशन जगत् तक ही सीमित न रहकर धर्मविद्या (theology) और मनुष्यविकास विज्ञान तक फैला है । पश्चिम में हेडेगर अपने विशिष्ट धातु मूलक भाषा प्रयोग और अन्वेषणवादी शोधन के कारण अत्यन्त कठिन दुर्ग और अतिसूक्ष्म दार्शनिक माना जाता रहा है ।

हेडेगर का जन्म जर्मनी में हुआ । उसने प्रारम्भ में नैतिकशास्त्र शास्त्र की शिक्षा प्राप्त की । १९२३ में अपने कुछ भाषणों के कारण वह मार्बुर्ग (Marburg) में धर्मशास्त्र का अध्यापक नियुक्त हुआ । १९२६ में अपने धर्मशास्त्र की निष्कारण में फ्रीबर्ग (Freiburg) में उन्नीसवें वर्ष उगरी नियुक्ति हुई । तब से अध्यापन का काम करना रहा है । शिरीष विश्वसुद्ध में तात्कालिक भावना के समर्थन के कारण युद्धावस्था में उसे शिरीषविद्यालय से कुछ समय के लिए हटा दिया गया था ।



हेडेगर का भूतान्तविद्या (metaphysics) के विषय में अपना विशिष्ट दृष्टिकोण है । भूतान्तविद्या भूतान्त का विचार भूतान्त के रूप में ही करनी है ।

यन् विचार प्रतिनिधिर (representational) होता है । भूत म सम्बद्ध वचनित प्रतिनिध भूत यह पता करती है । वस्तु का भौतिक व्यवस्था मे घाग का सिन्धु उम पर आश्रित उमरा प्रत्यय (idea) भी हडेगर की दृष्टि स वस्तु ही है प्रतिनिधिर रूप म । भूतानातविद्या का यह प्रतिनिधिर दृष्टि भू (being) म मिलता है । यथार्थ भूत म भू (= जाना) म प्रतिनिधि निर्माण का आधार है । यह भू अस्पष्ट और विचारानात रहता है मरिण मका प्रतिनिध नही निमित्त किया जा सकता । यद्यपि पश्चिमी भूतानातविद्या ने भू * का अध्ययन किया है और मक प्रत्यय भा बनाय हैं किन्तु भू का मत्य मय तब आवरणित हा रहा है । प्रत्यय बनान हा भू भूत बन जाता है फलत रिण जाता है और अमत्य निष्पण म परिवर्तित हो जाता है । हडेगर के मन म पूरी पश्चिमी भूतानातविद्या की परम्परा अमय का निष्पण और भय जान का विस्तार करता रही है ।

हडेगर के अनुसार भूतानातविद्या आधारित ज्ञान के कारण शक्तिमय भू का प्रतिनिधिर रीति म विचार नही कर सकती । वह वस्तु और वस्तुगत प्रत्यय का मूलधार (भू) का नहा पकड सकती । मरिण भूतानात विद्या का धारिण रि व भू का प्रतिनिधि नूदन का प्रयत्न मया तत्सम्बद्ध प्रश्न का समचित उत्तर म करने का अपना सामय्य का म छोड म । वह अपने मय भूत न सौमि रह । मरिण है कि मया हडेगर भूत म वस्तु और वस्तुगत विचार जाना का समानित कर जाता है । म तरह वह भू म सामास्यार के रिण भूतानातविद्या का अतिव्रमण धारण्य मानता है । भू का प्रतिनिधि नही जाना जा सकता किन्तु उम पुनस्मृति (recall) और विचार म पुन जोगुत किया जा सकता है । यन् काय पारम्परिक भूतानातविद्या म निमोजित चिन्तन नही कर सकता क्यार्कि व तब मयात् विषय विषया के दायर म हा प्रियागत रहा है और म प्रिया म फलत प्रतिनिधिर है । हडेगर के अनुसार मरिण विज्ञान समान विज्ञान भूतानातविद्या धारिण जान के म मय माग प्रपूण है और भू का मनन म प्रस्तुत करता है और मानव का भू म

- म भू का रिण्ट हडेगे स्था आग चचित हागा । भूत मयात् निश्चित पनामय्य मरितर जिम भू के मय्य म भूत (being) कहा गया है । मका भी विस्तार विरचन माय हागा ।

उसके आधार में विद्विन्न करत रहन है। आज के युग में भू का उपाग और मानव की विद्विन्नता—यात्रिका श्रीजागिना और यथाशक्ति का कारण—अपने उच्चतम शिखर पर पहुँच चुकी है। इसलिए इस भू की पुनर्मृत्तिया पुनर्जागति मानवीय स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

यह भू (being) क्या है? हमें यह ज्ञान प्राप्त हुआ कि भू (being) का अर्थ है—विशेषतः परमिनाइडस (Parmenides) और हेराक्लिटस (Heraclitus) के आधार पर स्थिर करता है। इन दोनों के मतों में भू का जो स्वरूप है वह स्पष्ट और जीवन शक्ति का प्राकट्य और प्रकाशित रहने का सामर्थ्य में युक्त है जिससे जीवन प्रकृति (physics) कहा गया है। यह समस्त भूत जगत् (beings) का आधार का आधार है किन्तु मान भूतगत नहीं है तथा भूत से सीमित या उसका द्वारा समाप्त नहीं है। इस समझने के लिए याद रखें और युक्तिसिद्धि का आधार में लिया गया है। याद रखें की दृष्टि में जन्म जन्म (rebirth=भू) सामान्य (समुच्च) अणु (infinitesimal) किया है अर्थात् वर्तमान में मृत है और साथ ही साथ अत्यन्त भावनात्मक मन्त्र (verbal substantiv) भी है। इसलिए यह है कि यह भी मृत्यु है। सामान्य ज्ञान के कारण हमें इस तत्त्वता अवस्था और अनिश्चितता है और श्रिया में मेरे बल और निश्चित (determinate) भी होता है। यह कामस्व ज्ञान है भू है। ज्ञान अनिश्चित है जबकि है निश्चित। किन्तु यह है म भी अनिश्चितता है यह मन्त्र सुनाऊ है सीधा और कठोर व्यापन हममें नहीं है। अर्थात् हम है म ममानता है कुछ भी हा ज्ञान का प्रति है जिस याद रखें का माप में विमर्शितिकार (inflection) के रूप में स्वीकार किया गया है। अतः कृत्रिम उपायों का द्वारा यह बात स्पष्ट करना है। आज के ज्ञान की माप में हमें हमें प्रारंभ के प्रमाण करते हैं—ईश्वर है पृथ्वी है मापण कर्म में है विज्ञान ज्ञान का है बुद्धि वाग में है रमण कर्म में है धर्म। इन सत्रों में है निश्चित किन्तु मिश्रित रूप में है। जन्म—ईश्वर है म ईश्वर वास्तव में विद्यमान है पृथ्वी है म पृथ्वी ज्ञान अनुभवगम्य रूप में उल्लिखित है मापण रमण है म मापण कर्म में ज्ञान विज्ञान ज्ञान का है म विज्ञान ज्ञान का बना हुआ है बुद्धि वाग में है म बुद्धि वाग में वर्य है या ज्ञान ज्ञान है रमण कर्म में है म रमण कर्म में पण रण है य पण रण है—न मिश्रित गत विद्यमान है। इनका अर्थ हम भी प्राप्त किया जाय पर ज्ञान स्पष्ट है कि है रमण

भू' निम्न निम्न स्था म प्रकट होता है।

‘म तर’ य निष्कय प्राय है कि भू मामाय (तुमुत्) ध्रुव विरा (infinitive) तान क वाग्य अनिश्चित अस्पष्ट और स्वतन्त्र है किन्तु माय हा माय है म धनिष्ठन मन्वद तान म य निश्चित बढ और स्पष्ट भा है। धन य निश्चित अनिश्चित स्पष्ट अस्पष्ट और स्वतन्त्र-अगत्य क तत्परर विरागा का समन्वित विर दृष्ट है।

भू (being) क तुल्यति विचार म भी कुछ तथ्य स्पष्ट तान है। हमारे ग्रीक तमन मस्तुन धाति धनर भाग्यार मायाया क भूत धातु स्था का म मन्म म विचार करता है। हम धननी मामा-मामध्य क अनुगामन म कवन मस्तुन तान पर ग विचार करेंगे। भू क भूत म भू धातु है जिसका धय जाता है प्रकट होना या धाविर्भाव। अस्पष्ट और अनिश्चित कुछ म जति क तान धाविभूत या प्रकट (emerge) होता है। माम मन्वद धातु है धम जा प्राणारत या जावनमय (living) है। म परम्परा म धम धातु स्प मा धाता है धमना निवाम करना रत्ना (dwelling) धयात् स्यायिव (enduring)। धन भू गति क तान तान है-धमि भवति और धमति। धयात् प्राणवन्ता धाविभाव और स्यायित्व। यह प्रचान ग्रीक भू का म्य है। य तमा गति है जा ठगर धाता है उनिष्ठ जाता है, उनिष्ठ रत्ना है और स्यायित्व-युक्त है। म प्रक्रिया म स्वयमव यह गति एक मामा प्रहण कर रता है। य मामा वातर म धाया गया बचन नहीं है बल्कि म्मव स्वयभूत की त्म र म्म म्मूनि (fulfillment) है। धाविभूत होन म हा य मामा धननिष्ठ है। क्वाकि म्मका धाविभाव मामातरगत धयात् म्ममय (morphe) जाता है। फल य व अस्पष्ट प्राणवान गति है जा स्वयभू है स्ववद है स्वाश्रित है और स्वचालित है। य गति म अन्त्यस (concealment) म ध्यस्त जाता है तब भूत का भव म वम्नु या भूत का धाविभाव जाता है निम्नता होता है। म धाविभाव क भूत म प्रक्रियत धान गि विद्व (conflict) है। य विद्व तात्ता नहा जाता है मग्न्य करना है। हम एक ध्रुव उपागण म म्म स्पष्ट करन का प्रयत्न करें। बात्र म एक गति है जा अलक है किन्तु जिसम समाविन के है। मधय क परिणामस्वरूप गति व्यक्त म्म (=ता) का एक मामा प्राय करता है। यह मधय या विद्व उम बात्रगत प्रक्ति म ग निम्न है और म्मा क माध्यम म प का भाग्य पता भूत भूमि धाति माश्रित या मूजित रत है।

भू का अन्तरंग गुण है जिसमें वह सब जाता है और प्रकट होता है और भू स्वयंमय सिखाया या भेजा म विभक्त होता है तथा वह स्थिति धरणा और प्रेम में रिरगित होता है। जब यह सघट बन हा जाता है तो भूत (o sent) नष्ट हो जाता सिन्तु उसमें मे भव बना जाता है। अथ निर्मित भूत रूप में अनुमयगम्य वस्तु मात्र रह जाती है। (इसमें वह भव बना जाता)। यक्ति चाह जमा उमरा उपयोग करे। तू नि भूत अथ भूत के मन्त्र और मन्त्रों में रह जाता है मन्त्र तेरे वह भव विनो हा जाता है। फलतः भू रेगिण पक्तिवा से उपस्थिति और भव का अंगीकार प्रारटप (world epiphany) नष्ट हो जाता है। मर भूत वस्तुस्थिति हा जाते हैं।

भू—अथ भू—प्रारटप तथा प्रतानि भू विचार और भू—अनीय प्राप्ति के रूप में मा रेगिण मन्त्र समागता स्थापित करना है। भू में धारिर्भाव है अर्थात् वह भूत रूप में भव (becoming) है और अर्थात् प्रारटप गुण है। भू में धारण म पश्यता का गुण प्रारटप ही है जिसमें प्रतीति स्वयंमव निमित्त है। भू और विचार (thinking) में लता है क्योंकि भूत विचार धार (apprehension) पर धारित है। बाध प्रारटप का अविभाज्य प्रग है। मन्त्राय के मन्त्र में भू है ना सिन्तु रेगिण अनीय (onlit) के धारण का प्रापण अर्थात् रहता है क्योंकि अर्थात् भू-वाचन का है और भूय स्वा रार के साथ। अमनित्वता (subtlety) का जाता है ता भू या म य का सिद्ध कर सकता है। फलतः अर्थात् है। भू रक्षा धारणित्वता और वस्तुनिष्ठता का सिद्धा और सिद्धा का धारण है। धारणा तन्त्र है नाना न।

भू पारित वामन (constant presence or standing presence) है। एर और धारण के रूप में पश्यता के मन्त्र है म अस्मिन्मन्त्र रक्षा है। मन्त्र के लाना तन्त्र करि वामन मन्त्रों में। मन्त्र लाना मन्त्र है।

तन्त्र में भू लान मन्त्रों में गिरा है ता भूत म भूत त पश्यता में भूत नष्ट में एर काय धार पश्यता है जिसका माता धारणित्वता (unity)

मन्त्र (mantra) का अर्थ है विचार और अर्थात् अर्थात् मातृभाषा में वह मन्त्रों और मन्त्रों (c motif) के समागता में मन्त्र मन्त्रों का अर्थ है। मन्त्र मन्त्रों और मन्त्रों त मन्त्रों मन्त्रों है। मन्त्र एर धारण और विचार मन्त्रों।

होता है। यन्त्र म प्रभञ्ज मिश्र म अग्निम अथस्त्या म ध्वजस्या और
अमृतता म मृतता उत्ति करता है। मनुष्य और भूत का मुखा करता है। भूत
ममूह रूप ग्राम (morpho) भू =। म प्रकार मनुष्य मूम स्तर पर भू ह
नृ (मर) म है और नृ (भूत=स्तु=अथ) म माय है। मस्तिभू का पुन
स्मृति (recall) म मृत स्तर का पाठ करता पता है क्वाकि स्मृतस्तर
अभान् भूत या रूप भू ता आउगित रखन है। मस्तिभू का म रूपमित
अस्तिता ता नवाग्ना (nibilation) उमता पुनस्मृति क तिय अनियाय है।



अथ भू क विविध रूपों पर विचार करने की स्थिति महिम है। प्रमुक्त दा
रूप रूपाय है — (१) भूत (beings) और (२) भूत (being there)।
प्रथम वस्तु जगत् है और दूसरा मानवाय अस्तित्व। म्हेर के अनुसार अस्ति
त्वे भूत प्रथान् मानव का है भूत का नही। मस्तिभू अनियाय है नि
अस्तित्व क्या है यन् समभा जाय। म्हेर की अस्तित्व का धारणा भी
नही है जा म भू म प्रवागित जाता है। अस्तित्व का मम्बय नतिन और
धामित क्षेत्र म नता है वति दशनगत अतिश्रमण अथवा अनान नात (trans
cendence) म है। नाता (to exist) वस्तुन स्व म बाहर नय म होना है
(to exist to stand outside) अथान् मवम्ब अस्तित्व है। मय या मसार
पुनप्रस्त है त्रिम मनुष्य का अस्तित्व मम्बयन होता है और इम सम्पद पर
य आति रूपा है। यन् भू का बाह्यीकृत रूप (overtness of being)
है अथान् मवाम्ब और मवामिमुग फत मय-गीमित। भू म आविभाव
और प्राक्त्प का अतिश्रमणीन गति है। म्ही अतिश्रमणीनता (trans
cendence) का प्रर वाग्गी म् अस्तित्व है। म्हेर म पूव कीर्तगा और
वाग्पम भी अतिश्रमणीनता का स्वातार वरत है किन्तु य म् चेतना का
गुण मानत है त्रिमक नाग व्यक्ति म्बिवाग य तिय म्बानात और मामा
तीन ना का प्रयत्न करता है। म्हेर म् चेतना का गुण नही मानता बलि
म अतिश्रमणीनता की प्रवृत्ति का मानवाय वाग्बिवाग य विधात म (या
म् के विधान म ना मभातता म रूप म गतिन करता है।

अथ तामम्बद दूसरा प्रर उठा है कि यन् वाग्बिवाग क्या है? म्
धम म मा म्हेर परम्परागत वाग्ना म म्बिवाग रूपा है। म्मू की

परम्परा में वास्तविकता का सम्भावना में प्रवेश माना गया है।* अर्थात् वास्तविकता का विज्ञान में वास्तविकता का गुण है जो उचित सम्पत्तियों में आविर्भूत होता है। नन्द् का भाग्यवाद मुख्य में सम्भव में उपलब्ध होता है जो वास्तव में प्रथम नन्द् का वास्तविक विज्ञान में ही गमित है। नन्म स्पष्ट रूप से वास्तव में सम्भावना—परम्परा या गौण गुण है। हडेगर के अनुसार यह परिभाषा सम्भवगत अर्थात् भूत तत्त्व की सीमित है भूत अर्थात् मनुष्य की वास्तविकता का या भूत तत्त्व का गौण। नन्मिय का नयी परिभाषा देना है कि वास्तविकता सम्भावना द्वारा निर्मित है।* अर्थात् वास्तविकता का विज्ञान में सम्भावित तत्त्व की सम्पत्ति (अनिश्चितता) में निर्मित है सम्भावना में वास्तविकता का विज्ञान ही नया होगा। फलतः मनुष्य की वास्तविकता (अस्तित्व) का विज्ञान में भी सम्भावना की क्षमता (अनिश्चितताशीलता) है। यह चेतनात्मक गुण गौण अस्तित्व की विज्ञानात्मक अनिवार्यता (structural necessity) है।

नन्मर अपनी पुस्तक (being and time) में कहा पर भी मनुष्य का प्रयोग नया तत्त्व का भूत (being there) का करता है। भूत अर्थात् भूत तत्त्व का रूप। तत्त्व का वास्तविक विज्ञान या वास्तविक विज्ञान का अर्थ है। दूसरा तत्त्व। मनुष्य के तत्त्व का निवासस्थान (dwelling) है। नन्म नन्मर मनुष्य में मनुष्य का और माथ की माथ मनुष्य (मानव) में का प्राक्तन (openness) में स्थित है। मनुष्य में मनुष्य (essentially) सुगम है वास्तविक उमरा माथ उमरा अस्तित्व (अनिश्चितताशीलता) में ही निहित है।* नन्म एक बात स्पष्ट है कि भूत मनुष्य में स्थित तत्त्व का भी चिन्तन देना है नन्म नन्म सम्भावना नया तत्त्व का और नन्म मनुष्य का तत्त्व जाना है। मनुष्य का अस्तित्व में का एक रूपविधा (mode) मात्र है।

मनुष्य अस्तित्व में है। नन्म नन्म पर वास्तव और विचार हैं। नन्मिशा वास्तव का अस्तित्व है। नन्मिशा वास्तव नाम क्या है? या

* actuality : prior to potentiality

• Actuality : constituted by potentiality

• The existence of the human being is its existence in time and space

मन है ? यदि यह शरीर न है तो दूसरा शरीर जिससे गांधी बना नहीं है ? यदि शरीर का विघटन (आकार प्रसार रूप-रूप आदि) इससे गांधी है तो तब ही दूसरा शरीर यदि न तो क्या वह इससे गांधी होगा ? स्पष्ट है कि नाम शरीर का आरंभ अनिवार्य है पर शरीर नहीं है । तो क्या यह अनिवार्य है—एक विशेष अनिवार्य ? अतः अनिवार्य का नाम जिससे गांधी नहीं बनता क्योंकि वह अनिवार्य व कारण या प्रकृत हानि में विघटित होता है। सामान्य अज्ञान है । नाम ब्रह्म का लोका है ब्रह्म जो अविनाशिक है । स्पष्ट है कि इससे गांधी न एकात्मिक रूप में शरीर है और न अनिवार्य फिर भी हम नाम में दाना समाहित हैं । अनिवार्य व सामान्य में एक अनिवार्य निमित्त है । इससे गांधी व अस्तित्व है जो क्षणिक है अथवा निमाकी बटी है किमीका पत्नी है कहा पर काम करती है कुछ भी हाँ मकती है आदि आदि । इस अस्तित्व में शरीर (object) और अनिवार्य (subject) का एकान्वित है भू-रूप है । प्रधानमंत्रियों और सामान्य भाषी शब्दों का आरंभ करत हैं । फलतः भूतत्त भू का अभिव्यक्त (overt) रूप है जो शब्दों की सामान्य आवृत्ति है और भू शब्द व कारण अनिवार्य भी प्रकट और आविर्भूत हानिवाला अथवा अस्तित्व है । यह अस्तित्व व कि शरीर एक अनिवार्य से समाहित है इस निमित्त शरीर या अस्तित्व है । इसलिए नकारता या अनित्यता भा भूतत्त का निमागक तत्त्व है ।

भूतत्त अथवा मनुष्य का प्रकार भवम् (being in the world) है । उक्त तीन परस्पर सम्बद्ध रूप हैं—(१) तथ्यता (facticity) (२) अस्तित्वता (existentiality) और (३) व्युत्ति (forfeiture) । ये तीनों प्रकार मनुष्य की भूतत्त सामान्य और अनित्य स्थिति में प्राप्तिभूत होते हैं ।

प्रकृत भव तथ्यता है । मनुष्य भव मरता है । भव में स्थित भूत वस्तु और अथ परस्पर सम्बद्ध है । जन्म के समय मनुष्य स्वयं का इस भव में पाता है । इसका तुला वह स्वयं नहीं करता । इसी भव में वह अथ उत्पन्न करता है । मनुष्य भव का एकान्वित वस्तुधा का एक भाग है । फलतः तात्त्विक दृष्टि का भाव वस्तु ज्ञान नहीं है मर नहीं है । यह भव इस रूप में मरिच (continent) है हमें यति घटनाओं व मरान और उपनिषदों का ज्ञान मरिच रूप में मनुष्य का स्वाकार करना पड़ता है । यत्ना

क्या है ? इसी लिए मनुष्य के स्वभाव अस्तित्व विधा (mode of existence) और भूत में उसके सम्बन्ध का विवेचन आवश्यक है।

जमा कि पत्र भी कहा जा चुका है मनुष्य एक सम्भारना है। वह स्वा-
तीत अग्रिम भू (being in advance of himself) है। इसलिए उस
एकानक सभावनाया में चुनाव करना पड़ता है और भू कि यह चुनाव अन्तिम
नहीं होता इसलिए यह अनिश्चित है। उस मतन अनिश्चितता में रहना पड़ता
है। यह अतिशयशक्ति पर आधारित सम्भावनाया का चुनाव भव में ही
घटित होता है, अन्त में नहीं। इसलिए उसके अस्तित्व की एक विधा है और
उस विधा का एक विधान या ढांचा (structure) भी है—यह है नवस्थ भू
(being in the world) अर्थात् भव में उसका अस्तित्व। उसका भू इस
नवस्थता के द्वारा निर्मित है। फलतः वह भव के भूत (beings) से अर्थात्
वस्तु और अर्थ मनुष्य में—घनिष्ठ सम्बद्ध है। वह उनसे निरपेक्ष नहीं रह
सकता। भूत-सम्बद्ध बाध उहमें चिन्ता प्रयत्न—ये सब उसके अस्तित्व के
आधार हैं। उसका निजी भव उसकी मलग्नता और चिन्ता का भव है निरपेक्ष
वस्तुओं का नहीं। यह भव की वस्तुएँ मनुष्य के लिए उपलब्ध (ready to
hand) हैं। ये वस्तुएँ भी अपने सम्बन्ध में निर्मित एक भव में स्थित
हैं। भव का कुर्सी में उस पर रको बागज धाति से सम्बन्ध है। इस
प्रकार वस्तु की मत्ता भी उसके सदर्थों और सम्बन्धों में निर्मित है
वस्तु का एक अपना समार है जो मनुष्य (भूत) के सम्मुख प्रकट
होता है जो मनुष्य उसे प्रकाशित (illuminate) करता है। मनुष्य का
भव इन सम्बन्धों का व्यवस्था से बद्ध है किन्तु उसका अस्तित्व सम्भावनाया
का छोटा अनिश्चित प्रेरित और विभागीत है। अपना सामान्य योजनाया
(projects) का परिणत करने के लिए मनुष्य इन वस्तुओं का उपयोग के
रूप में प्रयोग करता है। यह भव प्राप्त भव का मनुष्य अपना सामान्य के
अस्तित्व के अनुसार पुनः व्यवस्थित या पुनर्निर्मित करता है अर्थात् भव होता
है। स्पष्ट है कि यह नव वैज्ञानिक अवस्था ज्ञानवादी दशन के भौतिक भव
(physical world) में पूर्णतः मिश्र है। पश्चिम के लिए विकृत नवान
और माश्रय पूर्ण है। भारतीय के लिए ज्ञान यह उतना अवरोध भग्न नहीं
है। यही भव का भव-सागर माना जाता रहा है।

वैज्ञानिक भव की वस्तुओं का प्रश्न विद्यता (vorhandense) के रूप में
गृहीत करना है जबकि मनुष्य उनको उपयोग के रूप में। इनमें विभाग नहीं

३. विन्तु ज्ञान का दृष्टि में वैज्ञानिक का जगत् ऐकान्तिक और जावन रहित
गता ३. अन्तिम लक्ष्य और भू का आवरणित वर्ण बनाता जाता है ।

मनुष्य का मम मध्य सत्ता का मध्य द्वार उत्तिष्ठा म भा हाता =
 गरित य दूमरा व साथ (being with others) यथा म भू भी = । य
 म भूय भा उसका सत्ता का निमागक तत्व है । मनुष्य की गता सामाय है
 ममममर = पवन परस्पर आश्रित है । नवा का यथ है पार्थी प्रजा और
 गजनानि और पार्थी भी नवा प्रजा और राजनानि म मयुक्त है । पवन मनु
 स्य मनुष्य का = पारंगल = नवा बनाना दूमर उत्तिष्ठा म भा मभावना का
 ममूनि = मयायना नवा है । वेग का मनुष्य विषयागत (subjective) एका
 तिर और यथा म विच्छिन्न म । है । वह मन तर अनिर जावन व यथा
 म दृश मभा है उमम मयुक्त का नही निमित्त का है । दकात का आत्मनिष्ठ
 नवना विगित्त में गाचना है अन में है व एक पाल्य मानव व मवया
 दिगताम मगता यन्ति गाधारण जन है का प्रामाणिक बनकर अमाधारण
 नाना = । वेग का प्रकाश मनुष्य विचार का ध्वनी पर ममक पर मा मभा
 यत्ना = ।

[illegible]

सत्यमेव जयते

घोर विनाशकारक विधि है। यदि व्यक्ति जगत् भरभरा हुआ जाता है तो वह वस्तु की धार भावना है यन्मुखन हो जाता है घोर परिणाम स्वयं स्व मय म विद्यन हो जाता है जबकि वह यदि हमारा सामना करेगा तो वह स्व मय की पूर्ति का आरंभ करेगा प्रगल्भ होकर वापस लौटता है। यह राजास मनुष्य का इस अर्थ में स्वतन्त्र बनाना है। वह भू का सामाजिक बनना है उसे स्वीकार करने या अस्वीकार करने का चुनाव या निगम प्रति बाध है।

मानव अस्तित्व का विनाश (collapse) मनुष्य सत्य में यह परिस्थिति पूर्ण तरह लक्षित होना है। भूतन (मानव अस्तित्व) वन्दन हो मनुष्य भूयमान भू है इसलिए भविष्य में सन्निहित होना है। विन्दु माय हो माय मय मया भूत में सम्बद्ध भा है। विनाश में यह स्थिति लक्षित है। विनाश के अन्तर्गत तात्पर्य है। प्रथम व्यक्ति का सत्ता स्वानिश्चय गुरु है वह जा है मानना है बलि वह जा होगा तो है अर्थात् वह भूत नहीं है भूयमान है समाध्य है। अनिष्ट स्वरूपन वह स्वाधीन है बुद्ध नया ज्ञान वाप्ता है जा अर्थ नग है। उम पावन या मध्य क विना उमरा उपनिधि क विना भावना विना है। दूसरा धार विना व्यक्ति की पूर्वप्रश्न मय में उपस्थिति घोर भव में स्व मय का स्वतन्त्र बनाने की आहुति का भा सामान्ति विद्य हू है। घोर अन्तिम रूप में विना क द्वारा मनुष्य क भवगत सम्बन्ध घोर बाध तत्काल प्रभाव या भावना भी लक्षित होनी है। इस तत्त्व विना मनुष्य की वन्दन मन घोर भविष्य की गर विवादा का समर्थ हू है।

अथ मनुष्य की अस्तित्वगत सत्ता की समाध्यता का समझना जरूरी है। समाध्यता है। तहा अनिष्ट यह अन्त घोर अपूर्ण है। साधना घोर पूर्णता अप्राप्य ही रहता है। मृत्यु क आगमन में मय सभावनाया का हरण हो जाता है। विन्दु मृत्यु भी तो सभावना है। जन्म होता है फलन मोन भाती है। इस संभाव्य मोन का सेवन मनुष्य प्रारम्भ से ही करना है। वस्तुतः मृत्यु उसकी सत्ता में हो समाप्ति है उस हत्यामा गी जा मरना। इसे प्रामाणिक रूप में स्वीकार करना आवश्यक है। व्यक्ति मरना है इसका अर्थ है कि मृत्यु एक ऐसी सत्ता गत सभावना है जो अर्थ सभावनाया का हरण ही नहीं करती बल्कि उनकी मरुतरता घोर अनिश्चितता भी सिद्ध करती है। मनुष्य शून्य (जन्म से पूर्व शून्य है—मनुष्य के विना) में पला होता है और शून्य (मृत्यु) में विलीन हो

जाता है। मृत्यु में जावन या मत्ता की समता समझनी है अर्थात् मृत्यु शून्य (nothing) हान की सम्भावना है जो व्यक्तिगत मत्ता में ही समाहित है। मत्ता में व्यक्ति मृत्यु का यह प्रतीति होता है कि वह मृत्यु है, उसका अविभाज्य तिरोभाव (मृत्यु) व निराश है। यह तथ्य उसका दैनिक कार्य-व्यापारों में या व्यक्ति-व्यक्ति जावन-यावन में दबा दिया रहता है।

मृत्यु मृत्यु को प्रामाणिक जीवन यावन का परिचय ही नहीं बल्कि उस उस जावन में मत्ता भी बनती है। व्यक्ति मृत्यु मृत्यु व आभास में रहता है। मीन कभी भी आ मरती है। उसका आना जावन की सब वस्तुओं-धन श्री राग द्वेष अधिकार सब आदि का नश्वर निरर्थक और निराधार बना देगा। इस तरह जीवन में मीन का स्वीकार वस्तुओं की मरुत रूप में प्रकट करेगा। उनका अन्तर्ग्रहण करेगा। धन अधिकार राग द्वेष आदि का सम्पूर्ण मृत्यु हो जायगा उनकी निरर्थकता समझना अस्मिता नश्वरता व प्राकृतिक में उनकी व्यक्ति की दृष्टि में कीमत में घट जायगी। एसी मीन की व्यक्ति या ना स्वीकार कर या चुनाव-यह चुनाव उसे करना है। सामान्यतः मृत्यु व्यक्ति में चुनाव है। प्रामाणिक जावन का चुनाव करता है और भ्रमों में अन्तर्ग्रहण में जीता है। मृत्यु का चुनाव उसका वर्ण मृत्यु का दैनिक जीवन व प्रति पराक्रम विरक्त या उत्तमान नहीं बनायगा बल्कि उसमें एक तटस्थ भाव या स्थितप्रज्ञता उत्पन्न करेगा जिसमें बड़ा दैनिक जावन व व्यापारों में टगा नहीं जायगा और स्व का तद्रूप नहीं करेगा। वह भीमिन मायकता व माय उह स्वीकार करेगा। यह तात्पर्य में उसका जावन में अन्तर्ग्रहण मृत्यु भाव और महिम्ना उत्पन्न होगा। (मृत्यु का सम्बन्ध नास्तिव में है उसका विवरण आगे होगा।)

जीवन की यह प्रामाणिकता का प्रतिफल करने वाला अन्तिम व्यक्ति का मत्ता में ही निहित अन्तःकरण (conscience) है जो चुनाव व निराश बाल्य करता है और उसका अन्तर्ग्रहण का मृत्यु करता है। यह प्रामाणिक हान पर उसे प्रियकरता है अर्थात् प्रामाणिक बनाकर उसे नश्वरता का पहचानने और उस में अन्तर्ग्रहण की अन्तर्ग्रहणता उद्घाटित करता है। यह अन्तःकरण पूर्व जीवन विज्ञान व विज्ञान में ही है। यह समाधि मृत्यु है जो सब (निमित्त) मृत्यु (दैनिक मृत्यु जगत में तद्रूप) का उद्घोषण करता है। यह मृत्यु का प्रेरणा में मृत्यु (मृत्यु) अपनी सम्भावित नश्वरता का स्वीकार करता है। नश्वरता व माय (अपूर्णता)

सार्थ ने दर्शन का समाजपरक पक्ष अथ (other) की धारणा पर आधारित है। होगन आन्ति व परम्परागत दर्शन में अथ की बोध का एक विषय (object of perception) समझा जाता रहा है विषय नहीं। सार्थ इस प्रतिगत सन्ध में स्थित करता है और इसे विषय (subject) भी मानता है। चेतनाधी की अनेकता सार्थ-दर्शन में स्वीकृत हुई है। इसलिए अथ चेतना ही सत्ता सृष्टिविद्यगत (ontological) है। अथ व्यक्ति स्वयं एक अपने प्रतिगत और आन्तरिक विश्व का निर्माण करता है जिसमें मेरे विषय का गणना होता है। यह मेरे विश्व को तुरा लेता है फिर भी मेरे विषय का विषय रहता है। सार्थ इसे मेरे विश्व में एक क्षेत्र कहता है। अथ मेरी गार देगता है। इसी देखने के द्वारा स्वयं को मेरे विरुद्ध एक विषयी के रूप में निर्मित कर लेता है। तथा मुझे वह विषय बना देता है। फान सजा (shame) व्यक्ति में अथ के द्वारा ही उत्पन्न होती है। वह अपनी दृष्टि (look) के माध्यम से मेरा प्रतिनिधन करता है अथार्त् उसकी सभावनाएं मेरी सभावनाओं के पार जानी हैं। इस तरह सन्ध अथ के द्वारा मेरा अकरोध होता रहता है मैं अपनी परिस्थिति का श्राप नहीं रहता। अथ की दृष्टि मुझे उसके समार या देश (space) में व्यवस्थित करती है स्थित करती है। हमने अतिरिक्त वह मुझे काल से भी बाधती है। मैं उसकी चेतना में बद्ध हो जाता हूँ। उस क्षण मैं उसका दास हूँ जिसका परिणाम यह होता है कि लजा घमण्ड अलगाव आदि के मानसिक भावों के द्वारा मैं उसकी चेतना या दृष्टि के प्रति प्रतिनिधित्व करता हूँ। इन भावों की यति में जागति अथ की सत्ता को प्रमाणित करती है। अथ सत्ता विविधरूपी है कि उसमें मेरे सम्बंधों की निश्चित धारणाओं में भी बाधा जा सकती है।

अथ के भान से चेतना में दो प्रकार के दृष्टिकोण पक्ष होते हैं। या तो मैं जिस रूप में मैं स्वयं को जानता हूँ उसी प्रकृत रूप में स्वयं को समझू या जिस रूप में मैं अथ के पार जाता जाता हूँ उस परमान रूप में स्वयं को मानूँ। पक्ष में विषयी और दूसरे में मैं विषय बन जाता हूँ। इसका पक्ष यह होता है कि मुझमें आन्तरिक तनाव शीघ्र और अथ उत्पन्न होते हैं। यह अथ अनेकता अस्तित्व है। मेरे अस्तित्व के लिए यह आधारभूत नहीं है पर पक्ष है अथय। अर्थात् अतिवाय है कि मेरी चेतना का अन्त में अथ नहीं

हूँ का नकारात्मक सम्बन्ध स्थापित हो। यह नकारात्मक सम्बन्ध परस्पर जान के कारण विशिष्ट है। वस्तु और चेतना के नकार में परस्परता नहीं है जबकि अन्य चूँकि चेतन है भा मरी नकार करता है। मरी चेतना में द्वन्द्व उत्पन्न होता है जो एक दूसरे का मुकाबला करने रहते हैं। अन्य मरी चेतना काय का एक रूप में मौजित करना है। चेतना अन्य तक पूरा तरह से नहीं पहचानती और न अन्य का चेतना मुक्त तक पूरित आपाती है। इस तरह अन्य में सम्भाव या यह अस्तित्व का सम्बन्ध असम्भव हो जाता है। अन्य मरी मरी घनाभा के प्रतिप्रमाण के द्वारा मरी स्वतंत्रता का ज्ञान करता है। मैं अपनी प्रतिप्रमाणता या स्वतंत्रता को फिर से विज्ञित करता हूँ तो अन्य में द्वन्द्व का सम्बन्ध स्थापित होता है। युद्ध क्षण में मिपानी या प्रयत्न करता है। अन्य का भय उसे पीटा देता है वह उगरी समाजना घघान् करा का मरी जानता। अतः अपनी समाजना की सेवा स्थापना करता है। स्वयं विपदा बनने का प्रयत्न करता है।

वास्तव में अन्य भूत चेतना या विषयोत्पत्ति (concrete subjectivity) है। यह एक रूप में अनुपस्थित-उपस्थित है। मैं उसे विषय ही रखना चाहता हूँ अर्थात् उसका चेतना का अनुपस्थित करता हूँ जबकि वह चेतना मुक्त है इगति उपस्थित है। इसके अनिरिक्त रूप तारीरिक अनुपस्थिति के द्वारा भा उपस्थित है। उसी उपस्थिति परीक्षा है। क्योंकि एक ही क्षण चेतना में भा अनिरिक्त नकार पर स्थित है। यह तत्काल्य न हीतर अनुभूति गम्य है।



अन्य की उपस्थिति अनिगाव का और भी सघन और घनर क्षणीय बनाने है। अन्य मुक्त तारार के माध्यम में देवता है अर्थात् चेतना में मरी शरीर का रूप में प्रकट होता है—(१) शरीर जो अन्य के तारा जाना जाता है—अर्थात् है और (२) वह तारार जो मरी लिए है—स्वाय है। अन्य एक चीना के घन मानता गया होती है। इस प्रकार चेतना में विभाजन या सख्तन जान होता है। शरीर में गतता अनग होता ही है चेतना में भी अनगत्व उत्पन्न होता है जबकि अन्य रत्न चेतना में चेतना और शरीर में अनगत्व नहीं होता एका विज्ञित रहता है। अन्य के रूप में ही मरी तारीक-मगद चेतना के तीन रूप बन जाते हैं जो एक साथ उपस्थित रहते हैं विषय का र्थम या उपस्थाता है।

अप्य का विषय है ऐसा प्रतीति होती है। मैं अपने शरीर का अप्य का दृष्टि में दगन लगता हूँ। का कहें कि तुम्हारी आत्मा बिनती सराब है, कम प्रभाव से मैं अपनी आत्मा का सराब समझूँ और जम से नीचे देखन लूँ तो मैं दूसरे का दृष्टि में अपने शरीर को लग रहा हूँ। कमका अर्थ हुआ कि चेतना और शरीर का अनगाव होना है और शरीर मरी चेतना का ठीक उमा रूप में विषय बन जाता है जिस रूप में वह अप्य के लिए है।

स्पष्ट है कि मात्र व दगन में यह अप्य बना विघटनकारी प्रसिद्ध है। इसलिए हमें जानिपूर्ण मद्भावमय सम्बन्ध का निवा, कठिन है। मात्र धार्मिक भाषा का प्रयोग कम ही करता है कि अप्य मरी मून पाप है अर्थात् हमारी उपस्थिति सम्बन्ध पोहादायक अपराधजनक और कमनस्याजन है तैरिन हमें कोई बचाव भा नहीं है। अप्य व लिए मैं जमा हूँ हूँ। वह मुझे पूरा बनाना है अर्थात् मरी समावना का बद्ध कर मरी प्रतिप्रमण करता है। मरी स्वतंत्रता भा उमक लिए वस्तु के समान प्रसूत है। वह सम्बन्ध मरी मून स्व रूप अर्थात् मरी गतियुक्त चेतना को जह विषय में बनाना रहता है। हमारा उमका उपस्थिति मुझे म या तो प्रम व मारा उमरी स्वतंत्रता जीतन का द्वारा उत्पन्न करना है या कामच्छा (desire) व द्वारा उसका शरीर विजित करने का जान उपजानी है। कम कामच्छा का प्रतिफल घृणा (hate) में आ जाता है।

अप्य में प्रेम का सम्बन्ध कमफन होता है। यह कमफनता क्या है कम है? कम समझने व लिए मात्र की प्रेम की धारणा का विवेचन आवश्यक है। प्रेम उन अनन्य वृत्तियों (projects) का समाहार है जिसके द्वारा मैं अप्य का चेतन विषय (conscious object) के कमभव रूप में विजित करना चाहता हूँ। प्रम अप्य की चेतना या स्वतंत्रता का हस्तगत करना चाहता है तिन वह यह मनी चाहता कि अप्य एक भौतिक तथ्य या वस्तु के रूप में उस प्राप्त हो। यह चेतनायुक्त अप्य का चेतनायुक्त वस्तु बनाना चाहता है और यह कमभव है। इसलिए प्रेम विरोधजन है। प्रेमी और प्रेमिका परस्पर चेतन अप्य हैं। एकना स्थापित करने का प्रयत्न प्रेम है। यह प्रयत्न प्रायः दो रूप धारण करता है। प्रेमी प्रेमिका के लिए विषय है अर्थात् वह प्रेमिका की रक्षा व अनुकूल अपनी चेतना की अव्यवस्था करत हूँ—बनने की चेष्टा करता है। इस प्रकार अपनी स्वतंत्रता का इनन करना है और प्रेमिका की

दृष्टि से स्वयं को देयता हुआ विषय बनने का प्रयत्न करता है जिसमें आनन्द प्राप्त होकर प्रेमिका उससे एक हो जाय। ऐसा प्रकार का वस्तु बनने का प्रयत्न प्रेमिका भी अपनी ओर से करती है। स्पष्ट है कि छानना स्थापित करने की वह निया अर्थात् प्रेम असफल होगा। क्योंकि नाना अपनी चेतनाया का कभी भी नहीं हटा सकेगा यह असम्भव है। इसके अतिरिक्त जब भा प्रेमिका का यह आशय हो जायगा कि उसका प्रेमी एक जड़वस्तु मात्र है उसका आकर्षण समाप्त हो जायेगा। फलतः प्रेम असफल होगा। इस असफलता से बचने का प्रयास स्वपोषा वृत्ति (masochism) है। प्रेमिका से एक होने की चाहता में प्रेमी अपनी स्वतन्त्रता जो उसमें संघर्ष (conflict) का कारण हो सकता है का त्याग करने का प्रयत्न करता है जड़वस्तु बनना चाहता है। यह असम्भव है। इसलिए प्रेम असफल है अथ से सामंजस्य अशक्य है। फिर भी प्रेम एक प्रिय भ्रम होने के लिए मूल्य है। इसलिए मनुष्य जीवन प्रारम्भ से ही इसके वृत्त में घूमता रहा है।

परपाश वृत्ति (sadism) के द्वारा अथ की विजित करने का प्रयत्न प्रेम में अथ का स्वतन्त्रता विजय की असम्भावना के बोध से शुरू होता है। जब मैं अथ की स्वतन्त्रता को प्रेम के द्वारा नहीं विजित कर सकता तो मैं अपनी स्वतन्त्रता के सबन प्रयास में उसे विजित करता हूँ। अर्थात् अथ को अपनी दृष्टि में बंधन वस्तु में परिवर्तित कर देना चाहता हूँ। इस प्रकार उसके विषयीभाव (subjectivity) का तन्म नन्म कर अपने विषयाव की प्रति पा करता हूँ। पर यह अथ पर विजय नहीं होता उसमें प्रति उन्मादता (indifference) में परिणत हो जाती है। गरी विषयीभाव या स्वतन्त्रता भरे तिर टूट का कारण हो जाता है। अन्तर्गत का बाध मुझे चम्क कर देता है। क्योंकि मुझ में चम्कता है। चम्कता अभाव में उपजता है और निमी स्वबाह्य विषय के लिए होता है। अन्तर्गत अथ की उपस्थिति मेरी मुख्य वस्तुता के लिए अति बाध है। यह दूसरी बात है कि मात्र के मैं की मन्त्रणा क्या पूर्ण नया होता। कामेच्छा (sexual desire) से अथ में सम्मिश्रित होने का प्रयत्न मैं करता हूँ या असफलता हो मित्रता। पुण्य में नारी की अन्तः उमक शरीर के प्रति हो जाग्रत नया रचना उमक सम्पूर्ण शक्ति के प्रति जाग्रत है। किन्तु कामेच्छा में चेतना का शरीर में तन्म्य करने की प्रवृत्ति होता है। कामाग्र अन्ति वस्तु रूप हो जाता है स्वतन्त्र चेतना में हो रचना। अन्तर्गत

चेतना का अभाव म अय से सम्बन्ध हा ही नहीं सक्ता ।

कामच्छा म भी अय उपस्थित है । कामच्छा अय को कवन शरीर के रूप म जावित रखने का प्रयत्न ही है । आतिमन, लाह-दुलार (*caress*) आनि अय का मात्र शरीर का सत्ता का अनुभूति कराने का प्रयास है । 'अय' एक माध्यम म स्वयं क निग और भर निग भी शरीर (*flesh*) मान रहे । अय को स्व शरीर का मान मरे शरीर के द्वारा ही होता है । फलत कामच्छा म शरीरों का सम्बन्ध निमित्त हाता है चेतन और चेतन का नहा । यह कामच्छा का सम्बन्ध व्यक्ति का अय से आदिम सम्बन्ध है । मैं जससे अपनी स्वतन्त्रता का हनन करना ह और अपनी चेतना या ममावना को शरीर रूप बना देना ह इस आशा म कि अय भी ऐसा ही करेगा । अय ऐसा न करे तो यह प्रयत्न भी निष्फल होना है । पर यदि वह ऐसा कर ल तो भी सम्बन्ध की असम्पन्नता से नहीं बचा जा सक्ता । क्योंकि सम्भोग म कामच्छा की पूर्ण वृत्ति हा नहीं हाता, उसकी चरमावस्था म अय की विस्मृति भी उत्पन्न होती है । 'जसलिए सम्बन्ध कसा ?' इमने अतिरिक्त कामेच्छा के विकार (*disturbance*) क पलायन के परवान् 'अय' फिर या ता एक सामान्य विषय (*ordinary object*) बन जाता है या मुझे विषय बनाकर विषयी (*subject*) हो जाता है ।

कभी कभी यक्ति अय क इस शरीर पनायन को रोकने के लिए परपीडा (*sadism*) का आचार लेता है । परपीडक व्यक्ति स्वयं विषय अर्थात् शरीर नहीं बन सक्ता इसलिए वह 'अय' का—अपन शरीर को उपकरण (*tool*) बनाकर—'अति म स्वतन्त्राहिन शरीर बनाना चाहता है । पीडा क द्वारा उने शरीर की अनुभूति करव ता है और उसकी स्वतन्त्रता को विस्मृत करवाने का प्रयत्न करता है । स्पष्ट है कि यह रास्ता भी निरर्थक सिद्ध हागा । क्योंकि परपीडा क शिकार अय का सम्पण कभी स्थायी सम्पूर्ण और स्पष्ट नहीं हाता । कभी भी वह अपनी स्वतन्त्रता का छीन सक्ता है ।

स्पष्ट है कि साधन का दृष्टि म व्यक्तिगत सम्बन्ध असफल होने क लिए हैं । सामञ्जस्य या आतिपूर्ण मद्भास प्राय असम्भव है । इसका मूल कारण यह प्रतीत हाता है कि साधन सम्ब चेतना की अपनी मूल धारणा (जिसय नकार और प्रतिगमण ही हैं विधिपरक कुछ भी नहा है) म प्रतिपात हाकर ही निरचन करना है । अय हमारा उससे निग चुनीनी क रूप म ही आता है

द्वारा भी मृता म। अथ चेतना है विषय है और मैं भी वना भी हू। इसलिए मेरा या उसका प्रत्येक काय—चाह वह सत्ता हा या उन्हाट दना—मर या उसके लिए दपदमन या दोनता (humiliation) ही साबित होता है। अथ मेरी सीमा है मैं अथ का सीमा हू। इसलिए कभी कभी हम सीमा को टट करन की प्रवृत्ति घणा (babe) भी उत्पन्न करती है। घणा अथ की उपस्थिति से स्वयं को स्वतंत्र करने का प्रयास है जिससे मर अन्तगाव सजित होना है। बि तु यह घणा फिर मिट्टि अथ तक ही सीमित नहीं रहती चेतना की सबसेतुम्ही स्वतंत्रता पर आश्रित होने के कारण सबघणा म परिवर्तित हो जाती है। घणा भी असफल होती है क्योंकि अथ की सत्ता नष्ट नहीं हो जाती या की त्यो रहती है।

अम प्रकार मान का मानवीय जगत् द्वारा अन्तगाव अशांति द्वेष सधप हीनता पाडा निराशा असफलता आदि के नकारा से भरा पडा है। अब प्रश्न उठता है कि इस एकांत विच्छिन्न में स समाज कैसे बनता है? या सामाजिक सम्बन्धों के सदम म इस में की क्या स्थिति है? साथ चेतनाओं की अनेकता को स्वीकार करता है।^१ अर्थात् मैं अनेक हूँ। क्या ये मैं सब अन्त अन्त अमभूत अवस्था म है या रहते हैं? साथ का उत्तर है कि ये किसी समूह त्रिया (collective) द्वारा जुड़े हुए भी हैं। मतनव इनका समूहगत अस्तित्व भी है।^२ अस्तित्व को बह लो रूपो म देयता है—

(१) विषय-अहम (Us object)—जब मैं और अथ का सम्बन्ध या सधप होता रहता है तब यन्त्र का तीमर अति आन्तर हम देखता है ता मैं और अथ जाना हम तीमर के विश्व म विषय हो जाने ह। इस तृतीय के द्वारा मर और अथ की सम्मानना का रास्ता तोना परगा और नकारा जाता है। हममें मैं और तुम (अर्थात् अथ) एक हो जाते हैं विषयपर सम्मानना पना जाती है। हम सारी हम विषय की सामूहिकता कहता है जा अमाननकारा पुण्यत्वानता की अनुभूति और विच्छेद भाव का पदा करती है। हम अनुभूति के लिए तीमरे की भोजित उपस्थिति अनिवार्य होती है उबका मान ना पयाप्त है। इमास गापित और गापक का यम मधप उजगा है। अनुभा मग या नृताय सत्ता है। गापित का स्वातंत्र्य हम विषय से हम वपरा ना जाता ना है। हम ना यन्त्रित सम्बन्धों म प्राप्त प्रेम पना स्वभाव आति की मानना त्रियागत रहता है।

हम का बह बुद्धिम्य कारण उमा ना म अथाप्य है।

नता भी यह नृनाय पुण्य है। श्वर मन्त्र नृनाय रहता है अर्थात् विषयी हा रहता ॥

(२) विषयीक्य हम (We subject)---साँचा विषयाक्य हम का बसल मनावधानिक मत्ता मानता है जो बसल अनुभव मात्र है। इसकी मष्टिविद्यागत स्थिति न। है। उत्पन्नित वस्तुओं व समान उनक उपभोक्ता हान व कारण हम विषयी है। सभी प्रकार वसा वग जाति आदि विषयी हम व उत्तरण है। ब्राह्मणों ने शूरा का भाषण किया म ब्राह्मण विषयीहम व प्रतिनिधि हैं।

मसे में बहें तो साँचा व्यक्ति का वक्ति और समाज व सम्म म सह जीवी न मानकर सधप-आवी मानता है। यन्त्र और अय व मध्य का सामाधिकरण भी सामाधिक सम्बन्ध म भेयता है। यहा सा वह में की मत्ता का भूतता मनी। ब्याजि विषय हम की मानता दालिऊ है तथा नृनाय व मय पर भासित है। मय दूर होत ही फिर में और तुम का सधप प्रारम हा जाता है। इसक अनिरिक्त विषय-हम का एकना म वह पुरपत्त हीनता रहता है जबकि माकमवाद, जिसक वह प्रारम म सम्बद्ध रह चुका था इने अजय गति मानता है। साँचा का यह विचार पूणत व्यक्तिगत परिस्थिति और अनुभव स उद्भूत हुआ है। जमन भावमण का प्रतिरोध बरन वान बुद्ध यन्त्र मीर व साँचाद्वार व ममय यन्त्र गतिहीनता या मय का बात करें सा उमन अनुभूतिगत प्रामाणिकता समक म आता है। किन्तु दशन की वस्तुपरकता म उमग विचार पना हाता है। अस्तित्वशास्त्र इस रूप म बरन व्यक्तिगत दशन वन कर रह आता है।



व्यक्तिगत परिस्थिति की प्रतिविद्या का दूसरा परिणाम साँचा व। वरम स्वतन्त्रता की धारणा है जो मय गति वक्तिता---विशेषण साँचिय वारा---म मत्तयिा नोप्रिय एवं प्रचलित है और बहुत ही गहन ममभी गयी है। हम चरम स्वतन्त्रता व दानिक रूप का सामायन प्रचलित स्वतन्त्रता है मित्र गमलता गति। स्वतन्त्रता का प्रचलित धारणा यह है कि व्यक्ति जा भी चाहे उम प्राप्ति करन अर्थात् उम अपना दान्य पूण वरन का गुयाण मित। बाई व्यक्ति एक साँचा रूप वान का वामना कर और उम उमा मय मित जायें। हम हा व, व्यक्ति चरम स्वतन्त्रता मानता है। दानिक चरम स्वतन्त्रता

म कामना पूर्ति नहीं होती स्वयं का निमाण होना है भ्रनाव या वरण होना है जो काफी कठिन कार्य है । मानस धारणा को राय (action) में मगुक्त करके लेना है । मनोनिष्ठ स्वतन्त्रता में पहने कार्य क्या है ? इसे समझें । बिना आशय (intention) की क्रिया कार्य नहीं है । एक तम्बाकू पीनेवाला याद गनरी में किसी घर में आग लगा दे ता उस कार्य नहीं कहा जा सकता । अतः राय में आशय जाना अनिवार्य है । आशय में अभाव की सहजानुभूति अनगमिन है पूरा में आशय की स्थिति अममव है । आशय में कांक्षित वस्तु नहीं है की अनुभूति और अंत होना चाहिए का जानसा होनी है । फलतः आशय में चेतना का भूत से मुक्त होने यथास्थिति में बिबुद्धने और समाप की ओर गतिगोल बनने की आवश्यकता निमित्त है । चेतना की यत्न नशरी क्रिया और एक उद्देश्य या प्रयोजन की प्रतिस्थापना की समावना ही स्वतन्त्रता है । अतः स्वतन्त्रता चेतना की वह गति है जिससे द्वारा वह कार्य के आधार पर भूत और यथास्थिति से मुक्ति प्राप्त करता है और स्वतन्त्र रूप में उद्देश्य और प्रयोजन का निर्माण करता है । अतः एक बात और विचारणीय है कि य उद्देश्य और प्रयोजन अतिम या स्थिर नहीं होने सत्य तदनिमित्त जान रहता है । क्योंकि स्वतन्त्रता अपना निर्मित में भी बद्ध नहीं जानी उमका भी यत्न नकार करता है । चूँकि चेतना सत्य निर्माणाधीन है कभी भी निर्मित नहीं जानी फलतः स्वतन्त्रता भी अनवरत गतिगोल सज्जन प्रविष्टा है ।

मा । मन स्वतन्त्रता के लिए कांक्षित सीमा मयात्त या बंधन स्वीकार नहीं करना है । यह नकार पर आश्रित है मनोनिष्ठ पूरा स्वतन्त्र है । बंधन तो मकार के कारण उत्पन्न होता है । ता कहते हैं अथ में प्रतिबद्धता आ जाना है जबकि ना में अथ में स्वयं का मकार जाना है अथ की अवहेतना होता है और मन का स्वतन्त्रता का उपरनिष्ठ भी । मनो आधार पर सार्थ नियतिवाद (deterministic) दाना का विरोध करता है । नियति में उद्देश्य नशरी या वस्तुभूत जान है । अतः मन उद्देश्य के दराव और प्रभाव के अनगिन चिन्ता स्वतन्त्रता और मानवीय यथाय का भुजा दता है । मानवाय यथाय स्वतन्त्रता में मन के कारण स्वतन्त्र जाना है । फलतः नियतिवाद निरपेक्ष मन है । स्वतन्त्रता का मया । तथा अवगत अथ स्वतन्त्रता हा है जिसमें उमका मया ना मयाय मयायिन होता है । मानस मन स्वतन्त्रता की

य अनुमान मृत्यु वा मृत्युभूत सुग उमरा निरूपणा तथा अपवर्ति (absurdity) है। मात्र हरेणर मानि म सत्यन न। है। यन् अमगन अनिग है क्यानि को भा यनि मय कन्न का अनुमान नया जगा मरना कवन अस्पष्ट रूप म नारी प्रती ता कर मरना है। मैं मरी याजना न। बनाना -दिष्ट नया गना। यन् यन् मरा ममानना न। है वल्लि मरा मय ममावनाधो का म न है छान म रूप म मरा समाननाया क वापर है। म मका सुनाय नया मरना। यन् अपन आप नना है मर मरा निमित्त या मजिन नया है। यन् मरे जावन के निग मो पुणन निरूपण है। अनिग यह अमगन है।

चतना सत्त्व गुण युक्त है । यह कि मृत्यु मय ब्रह्मा का धन । चतना भागी की आशा सजानी है जबकि मृत्यु उनका विनाश करती है । अथवा चतना में एता कुछ भी नहीं है जो मृत्युपर न या तमम न । अनिष्ट यह मन में जाकर है । यथा यथा मया जो मुझे प्रभावित करती है । गुरु करती है । मर सभाचना के समार को तन्म नन्द कर डालना है । माना का यह तर कि मृत्यु चतना में बाहर है कुछ मूल में । चतना ही सा । परिमित (finite) मानता है किन्तु मरणशान्त नी मानता । उसके अनुसार चतना यदि अमर ना तो । सो-उनाय के अवन स्वरूप के कारण परमिन तो योगी पर मरण पावता उसमें न । है उसका ज्ञान है । जगत् य मिद्ध न्या कि जीवन—जीवि व्यननता और उनाय है —की राह्य परिमाण मृत् है । वास्तव यह शरीर ही है चतनात्मक नै । मा । न नजन में जरार घोर चतना का भी एक स्तर पर आगाय आह्व है । फलन गगर वादर ह ।

मृदु मर जायत या स्वतंत्रता का परिणामा २०१३ का भरे निरा पूर्ण
 मयाह्य २०१३ । मुक्त नर उगह कर द पर मुझे छू न । मरणी मयाह्य बाधा
 नया वा मरणी । मृदु न । आता ३ तय नर म स्वतंत्र हू मृदु व भागमन
 व मर मी २०१३ । । मयाह्य मयाह्य वना ?

आरा माना यह कि मैं मरने के लिए मृत्यु नहीं हूँ बल्कि जात्रा
 ७७। चाचा भूतबुद्धि नहीं जाना (मृत्यु) तो जाता है। मृत्यु म
 जिन्हा जात्रा का मृत्यु वायसा कहें मृत्यु का मृत्यु विद्वान् या परा
 मृत्यु ।

म० रा य० स्वतन्त्रता मनु० का अनुप्रास्थायित्व पूरा लागू भागी न।
यताता बहिः तत्त्व वि० पूरा प्रविष्टताप ता प्रस्थापना ३ तत्र प्रेरणा

है नही। 'मरु' विषय प्रविवरण करता है। 'य' उत्तरदायित्व का मामला मरु तक ही सीमित नहीं है। पूरा मरु विषय का समाहित विषय हुआ है। अर्थात् मैं मुझमें सम्पृक्त प्रत्यक्ष वस्तु प्रकृति या घटना व निष्पत्ति उत्तरदायी है क्योंकि मरु विषय मरु है 'मरु' द्वारा अविवक्षित है मरु वस्तुका निमाण विषय है, 'सत्य' इत्यादि प्रमाण कहना अर्थात् तत्त्वम्बद्ध उत्तरदायित्व वस्तु कहना मरु वस्तु है और मरु प्रामाणिकता है। जो 'यति' दम प्रामाणिकता से वचना है वह मरु प्रवचन है।

•

यह स्वतन्त्र चेतना जसा कि पहले उल्लेख हुआ है चेतनायुक्त वस्तु बनना चाहती है। चेतना वस्तु से मरु के द्वारा बनना होती है। किन्तु अभाव होने के कारण वह अभाव हुआ नहीं रह सक्ती फलतः वह वस्तु का गतीय करना चाहती है स्वयं अभावपूर्ति के प्रयत्न में वस्तु बनना चाहती है। हमारे चेतना में चेतना में अपने गुणों के साथ ही वस्तु के गुणों का प्राप्ति करने की प्रवृत्ति दिव्य है। यह विषय और विषयी दोनों के अभाव का समन्वय इच्छा है। यह एकात्मिक वस्तु ईश्वर' में प्राप्ति है और मनुष्य का यह प्रयत्न ईश्वर बनने का प्रयत्न साक्षित होता है। यह प्रयत्न वस्तु रूप धारण करता है।

चेतना इच्छा रूप है सत्य इच्छा पूर्ति के नियम यह क्रियाशील रहती है। इच्छा अभाव से उत्पन्न हुई है। अभाव की सम्पूर्ति के नियम प्रकट होता है। इस अभाव में साथ आत्मसादन (appropriation) कहना है। मनुष्य की प्रत्यक्ष गति वस्तु या अर्थ को आत्मसादन करने के नियम उद्दिष्ट है। फलतः प्राप्ति या सम्पूर्ति का इच्छा वस्तु वस्तु होने का ही इच्छा है। वस्तु की गति में ही वस्तु विराजित करता है फिर भी वह वस्तु नहीं है और वस्तु का आत्मसादन करना चाहता है। यह क्रिया अनेकविध होती है अर्थात् चेतना में अनेकविध वस्तुमा अर्थात् अपूर्ण रूपों की ही स्थिति है। इसलिये व्यक्ति 'यह' या 'व' वस्तु विशेष के अभाव द्वारा अपने विषय को अधिष्ठान करने का प्रयत्न करता है। स्पष्ट है कि यह वस्तु में वस्तु पूर्णतः स्वतन्त्र है। फलतः व्यक्ति की गति तब वस्तुमा के माध्यम से विषय का आत्मसादन करने का प्रयत्न होता है।

असमय है फिर भी स्वतंत्र नियामक और उत्तरदायी न पुन है । यह अधिकान्त यत्ति की स्थिति का दृष्ट्य पक्ष है यत्ति य । भा कतावना है पर अमपन परिणाम उसका जमसिद्ध अविचार है । स्पष्ट है कि यह भा अय प्रचार का रोमासवान् ही है । यह अधूरे दान अभावात्मक दृष्टि और भावात्मक विरोह का आत्यन्तिक फल है ।



मार्टिन बूबर

(Martin Buber)

अभिप्रेत की शक्ति में बूबर भाषा का प्रतिनाम है। भाषा के समार में
 प्रत्येक म म का स्वयं या स्वयं व्यक्तभाव है। मैं और तुम में
 मात्र गौणमय्य अग्रगण्य है। दोनों के बीच मात्र एक वास्तविक संबंध का
 स्थिति रहता है जिसमें विपरीत बने रहने का सम्भाव्य और विपरीत का जान की
 या बना जिस जान का वास्तविक भागका में व्यक्ति मात्र ही रहता है। व्यक्ति
 दूसरे व्यक्ति में मतलब मुखावता करता रहता है। आन्तरिक अन्तर्भाव के कारण हम
 पतता और अन्तर्भाव में अन्तर्भाव रहता है और अन्य अन्तर्भाव तुम में स्वाभाविक
 समोजन स्तर का सब में अन्तर्भाव नहीं कर पाता। अन्तर्भाव 'यदि' के लिए नरक
 है। 'क्या' में अन्तर्भाव के अन्तर्भाव अन्तर्भाव विपरीत अन्तर्भाव को नहीं समझ
 सकता। 'तानि' में अन्तर्भाव और अन्य अन्तर्भाव है। अन्तर्भाव है कि
 अन्तर्भाव अन्तर्भाव है अन्तर्भाव में सिद्ध होता है अन्तर्भाव का जाना है। इस पर भी
 उम जाना नहीं है। क्या' अन्तर्भाव की अन्तर्भाव का वह हवा नहीं सकता।
 वह अन्तर्भाव अन्तर्भाव में अन्तर्भाव प्रवाह करता रहता है। अन्तर्भाव अन्तर्भाव
 अन्तर्भाव है अन्तर्भाव अन्तर्भाव का भाग अन्तर्भाव नियति है और अन्य अन्तर्भाव
 का भाग अन्तर्भाव अन्तर्भाव अन्तर्भाव है। अन्तर्भाव में मैं और तुम में अन्तर्भाव नहीं
 अन्तर्भाव अन्तर्भाव में अन्तर्भाव रहता है।

मार्टिन बूबर में अन्तर्भाव अन्तर्भाव अन्तर्भाव अन्तर्भाव का अन्तर्भाव का
 अन्तर्भाव अन्तर्भाव रहता है। तुम अन्तर्भाव अन्तर्भाव में मैं का अन्तर्भाव अन्तर्भाव

* The hell is other people — No exit a play by Sartre

उत्त जना वह अनुभव करता है। यह सब एक ही त और स्वरूप (चूँकि प्रकृति निरपेक्ष रहता है) होने के कारण अनुभवयुक्त तो होता है पर अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। स्पष्ट है कि खूब साज के विरुद्ध प्रकृति सभा में का सामाजिक स्थापित करना है। हम सम्मिलित न दूसरा स्वरूप मनुष्य के साथ मनुष्य में दिखाने देता है। हम स्वरूप पर मनुष्य दूसरे मनुष्य से अपनी धान भाषा के द्वारा प्रकट कर सकता है और उसमें उपपन्न प्रतिनिधता उपजा सकता है। यह सब एक स्वरूप होता है। अध्यात्म के साथ जावन में सामाजिक सब कल्पित किया गया है। यही भी व्यक्ति अध्यात्म की अनुभूति करता है जिससे सहजानुभूति और प्रकृति वास्तव होती है। यह सब एक स्वरूप तो नहीं होता कि तु यही दूसरा (अध्यात्म तत्त्व) ज्ञान अधिक मानता होता है कि वह व्यक्ति का सामाजिक को पार करता रहता है उसकी धानी की पकड़ में नहीं आता। फलतः उस सवाद की भाँकी भी अभिव्यक्त की जा सकती है।

दूसरे व्यक्तिगत सत्रों पर अधिक बल देता है उन्हीं के अध्ययन में अथ स्वरूप का व्याख्या करता है इसमें यह सम्मिलित अध्ययन आवश्यक है। हम सम्मिलित न जावन उसके त की धारणा है। त और यह का धारणात्मक आधार है। यह (It) त वस्तु या मनुष्येतर प्राणियों के लिये प्रयुक्त होता है जबकि तू मनुष्य के लिये ही मुरझित है और अनौपचारिक व्यक्तिगत सब के धनित्व का चोक् है। किसी की त व त ही व्यक्ति (तू) अपने प्रकृत प्रिय और सहज (परमानन्द गति सवियुक्त) रूप में उपस्थित होता है। प्रकृति भाषा त के रूप में अनुभूत होगी तो एक अनिवार्य नवीन प्रकृति लिए आए अवात् मानवीकृत रूप में प्रस्तुत होगी। दूसरी ध्यान धारणा का यह है कि तू के सब में व्यक्ति अपनी समझना के साथ प्रकट होता है। उसमें भावात्मक और बुद्धिपरक दोनों रूप उसमें सम्मिलित रहते हैं। खूब राग के उत्प्रेरण से हम स्पष्ट करना है। जब हम राग का सम्मिलित करने में न राग के विधान अन्तर शब्द आवाज ध्वनि का धारणात्मक विश्लेषण नहीं करते बल्कि राग की समझता ही न अनुभूति करते हैं और उसमें सामाजिक प्राप्त करते हैं। उसी प्रकार अथ व्यक्ति तू से सवाधित हाता है अपने समझ रूप में प्रस्तुत न जाता है। स्पष्ट है कि परस्पर तू के सवाधना में यह सब मनव है। यह प्रकृति निरन्तर चरनी रहती चाहिये क्योंकि धर्म का का निश्चित रूप नही होता और न मरने ही का स्थिर निश्चित

रूप है। इस प्रकार अर्थ को तू के रूप में अनुभव करने का अर्थ है अर्थ
मनस्य का संपूर्णतः जानना।

अर्थ में यहाँ तू का सम्बन्ध स्थापित करने का है। पूछते हैं कि इसका धर्म के
शब्द अनुकम्पा (grace) का आशय क्या है। यह तू भावी भित्त अनुकम्पा
में जाता है। उसका अनुसार अनुकम्पा सामान्य जीवन में ही क्रियाशील
होती जा सकती है। हम कविता पढ़ते हैं बुद्धि में खिन्नी भी चढ़ा करे इस
प्रणाली में कर सकते हैं। किन्तु वही कविता आनन्द या कष्ट कभी स्वयम्भू
अन स्फुटित हो जाता है। इस प्रकार नैतिक नियमों का हम सामान्य जीवन
करना चाहते हैं पर उच्च अनुभव नहीं करते। भाँडों की अग्नि का अनुसरण
करना चाहते हैं पर भस्म में नहीं कर पाते। पर अचानक किसी मित्र के
अद्भुत व्यवहार में हम अस्मित हो जाते हैं। भगवान् बुद्ध की धम्म प्राप्ति
में भी यही बात समझनी होती है कि अनुकम्पा से ही अनेक बार काय
सम्प्राप्ति जाता है। यह सयोगज्य होता है। जिसमें हम सामान्य जीवन में
सयोग कहते हैं। उसी भाव से पूछते हैं अनुकम्पा मानता है। इस सयोग में यह
आवश्यक है कि हम उसके प्रभाव फल या प्रेरणा को प्राप्त करने के लिये
चलते हैं। इसकी क्रिया में भागीदार बनें। उसके अनिश्चित इस अनुकम्पा
को प्राप्त करने के लिये हम प्रयत्न भी करें। सफलता मिले उसकी निश्चिन्ता
पर ध्यान न दें। तभी अनुकम्पा प्राप्त हो सकती है। इस तरह व्यक्तिगत
सम्पन्न अनुकम्पा के द्वारा हो जाता है। इस तू का अवतार भी अनुकम्पा
जय है सहज है और अनायास है। तू शुभ में मिलता है और मैं भी उसमें
साधा सम्बद्ध होता हूँ। फलतः इस सम्बन्ध में मैं चुनता भी हूँ और चुना भी
जाता हूँ। पूछते हैं अर्थ को प्रत्यक्ष रूप में ग्रहण करने और मैं का भी प्रत्यक्ष
रूप में गृहीत होने की क्रिया का मैं-तू की मता क्या है।

पूछते हैं कि यह अनुकम्पा काय कारण (कर्मण उद्भव और फल) की
परम्परा से बद्ध नहीं है क्योंकि इस भित्त में अनन्तता नहीं रहता अद्भुत
या सत्जीवन होता है। यह एक अचिन्त सम्बन्ध है जो भूत और भविष्य न
हाकर वर्तमान है। जहाँ कारण और फल के लिये अनिश्चितता का अभाव
है। इसके अनिश्चित इसी धर्म में समित अनुकम्पा का निश्चय
(pa. 1411) भी इसमें सम्प्राप्य है। भगवान् की अनुकम्पा पर आश्रित होने से

मैं तू का मित्र न हूँ। बूबर प्रत्यक्ता को आत्मा का स्वाभाविक निरति और व्यक्तिता को आत्मा का स्वाभाविक सम्पन्न (प्रवृत्ति) मानता है। समाज साधने प्रत्यक्ता में चरित जाति यत्नाय बुद्धिमत्ता आदि के गुण समाविष्ट है जबकि व्यक्तिता में मैं हूँ का भाव ही होता है मैं ऐसा हूँ प्रत्यक्ता है और मैं हूँ व्यक्तिता। स्पष्ट है कि व्यक्तिता में मनुष्य सामान्य मानने रहना है जिससे अनेक सहज सहजमानों सम्बन्ध निमित्त कर सकता है। मैं तू का मित्र व्यक्तित्व के स्वी स्तर पर घटित होता है। यहाँ प्रत्यक्ता नष्ट नहीं हो जाता उसका भी भाग रहता है पर यह मिसन में बाधक नहीं साधक सिद्ध होता है।



बूबर मैं और तू अर्थात् व्यक्ति और अन्य में सधन नहीं मानता। वह एक दूसरे के पूरक हैं अयोप्यायित हैं। तू के माध्यम से ही मनुष्य मैं बनता है। दूसरे मस्तिष्क को मैं सम्पन्न से ही हमारे मस्तिष्क का विकास होता है। दूसरे की उपस्थिति की अपरिहायता मात्र भी स्वाकार करता है पर वह दूसरे से सधन ही पाता है। बूबर प्रेम से इतना बाधता है साध के समाज तोड़ता नहीं। बूबर की प्रेम की परिभाषा समाद्वय सम्मेलन है। मरने तू के प्रति उत्तरदायित्व ही प्रेम है। अर्थात् दूसरे के सुख दुःख का भागी मैं हूँ। यह पड़ानी में प्रेम करे जमी सन्ध्या भावना पर आधारित है। यह प्रेम स्वतन्त्र नहीं दुर्लभ होता आत्मा। तभी यह समाज और राजनीति के क्षेत्र में सन्ध्या हो सकता है। राजनीति राजनीति प्रत्यक्ता अथवा समूह के चक्र में फँसा हुआ है। इसमें व्यक्तिता को उपमित किया जा रहा है। व्यक्ति व्यक्तिता पर जो ध्यान केंद्रित किया जाय ता उठता सा समनस्य दूर हो जायगा। व्यक्ति मनुष्य पत्ता आभा निमग्न हम (we) का भावना प्रस्तुति होगा। एक अन्य पुस्तक में बूबर प्रत्यक्ता (individuality) और समूहवाद (collectivism) में बूबर समाज के समाज की जनोपना करता है कि आना दृष्टिगण (प्रयत्न और समूहवाद)—बाह्य कारणगत और प्रकृत रूप में किन्तु ही भिन्न है—सारत एक ही परिस्थिति की उपज हैं। उनमें कवच विनाश का भिन्न अवस्थाओं का ही आधार है। यह परिस्थिति अज्ञानगत और समाजगत गुणोपना जिस और जीवन में मय और अमृतपूर्व अन्तर्गत की

अनुभूति म संयुक्त है। मात्र प्रत्येक मनुष्य मनुष्य के रूप में प्रकृति म बटा हुआ और व्यक्ति के रूप म समूह की भाँ में अलग हुआ मा समूह म करता है। इस परिस्थिति में उसकी पन्ना प्रतिविद्या प्रत्येकतावाता होता है और दूसरा समूहवाता। प्रत्येकतावाता व्यक्ति के अंग का भी स्पर्श कर पाता है जयकि समूहवाता 'यक्ति का भी एक अंग बना होता है। इस तरह दोनों समग्र और सपूर्ण (whole) मनुष्य की व्यवहसना करत है। एसा परिस्थिति म मनुष्य की समस्या का उत्तर है हम का भावना का विकास। हम उस समुदाय का अभि-यजता है 'तुम' शक्ति अपना स्वत्व (Selfhood) और उत्तरदायित्व का जानत है और 'मैं' तू के मध्य म समय समय पर आवित र ते है। सच्चा समुदाय एसा आधार पर निमित्त किया जा सकता है। निष्पत्ति हम 'मैं' तू समय निष्ठ 'यक्तियों का समूह है जहा 'यक्तियों की समान भूमिका के कारण मैं की वृत्तना के साथ साथ अन्य या समूह म एकाविति स्थापित की जा सकता है और इस प्रकार एक (व्यक्ति) और अनक (समाज) के विभाष का समाहार किया जा सकता है।

प्रम आध्यात्मिक यथाथ का अनुभूति भी करवाना है। मैं-तू के मिलन म तू मुझ साबोधित करता है ता वह मैं अपनी समान भूमिका म ही परिचित नहीं जाता यत्कि तू म स्थित परम तू म भी सम्बद्ध होता है। जिन समय अन्य तू के रूप म प्रकट होता है ता हम यह भूत जाने हैं कि एम तू का नश्यत देगानगन स्थिति है। चू कि यह बंधन होता है 'मत्ति ए 'मम' माध्यम म मैं' परम तू अर्थात् आध्यात्मिक परम मत्त्व का अनुभूति प्राप्त करता है। 'मम भगवान् हा मुझ साबोधित कर रहे हैं और उन मैं 'पंडित' नहा या 'गुरु' क्योंकि वह तू का सम्बन्धन मुझम उभय कर मगी मत्ता के पार जा रहा होता है। यह परम तू ही म सारल्य तू का आधार है। इसीलिए मैं-तू का सम्बन्ध सामंजस्य पुण और समन्वयकारी बना हुआ है। 'मत्ति ए भगवान् अर्थात् परम तू मैं के सम्बन्ध या प्रम का आश्रय है।

इसम बूझ यह निष्पत्ति या निष्कर्षना है कि ईश्वर को अनुभूत किया जा सकता है भाषा के द्वारा अभिव्यक्त नहीं किया जा सकता। अर्थात् ईश्वर की बुद्धिमत्त बनाकर परिभाषित नहीं किया जा सकता। वह व्यक्तिगत धनमय की समुक्त धारणा है। इसीलिए वर उन लोगों का मन्त्र होता है जो ईश्वर का धन धोरे भावित विषय में म एक विषय मात्र बना रहे हैं। दागन वरन ईश्वर

अतल,

मानव और मानवैतर के द्वन्द्व की समस्या मनुष्य की चेतना को आश्रित

सहा प्रस्तुत किये हैं। जन्म के साथ ही मनुष्य का इतर से मुकाबला होता है। * अन्तर एमा है जो वह नहीं है अर्थात् उससे इतर है दूसरा है। इतर चाहे प्रकृति के रूप में प्रकट हो अथवा सजीव व्यक्ति के रूप में एक दरार में और इतर के बीच उभर आती है। व्यक्ति देखता है कि वह इतर से अलग है निजातीय है अथवा असमान है। फिर भी वह विधानन इसमें इसमें और अंतर साथ रहता है। फलतः वह इसे जानना और समझना चाहता है। क्योंकि मनुष्य सदैव अथवा समन्वित होने की मूल एपणा उसकी चेतना का स्वधर्म है। वस्तुतः वह भिन्न है इसलिए सम्बन्ध के द्वारा अभिन्न होना चाहता है अन्त में एक होने के लिए मश्रिय रहता है। यह एक प्रकार का सामंजस्य की एपणा है जो कमोवेश हर व्यक्ति के अन्तर में स्फुट या अस्फुट रूप में हमला रहती है।

अन्तर अन्त रूप है। जन्म प्रकृति की विविधता सजीव प्राणी समूह पशु पक्षी मानव आदि के अनेक विभाग अन्तर में हैं। व्यक्ति को इतर की पहचान प्रतीति स्थिर होती है अर्थात् स्थूल होती है। अन्तर अपने मौलिक बहिष्कृत काय उसकी चेतना में प्रकट होता है। यह बहिष्कृत उसमें बाहरी होने की चेतना उत्पन्न करता है उस प्रस्तुत कर देता है। इसलिए व्यक्ति हम बाहरीपन

* प्रायः एम्ब्रियो फ़ॉर्म आदि भनावनानिक मनुष्य का जन्म की उसकी प्रकृति विभिन्न अवस्था मानने हैं जिसमें जन्म से वह अन्तर्गत और रिकतता में पाए जाते हैं। अन्तर्गत विश्व में वह विशेषी का माना है।

मनमान रिक्तता, स्व जीव इतर व बीच मुक्त गाड़ की पूरने का अपना सम्भाव्य गतिविधि व प्रयोग द्वारा भरमभ्रम प्रयत्न करता है। इसी प्रयत्न का परिणाम है उसकी धम धन नीति आदि का उद्भव।

एतर का जब वह भावात्मक दृष्टि में प्रेयता है तो इतर का भावात्मक रूप निमित्त होता है। एतर का अनुमान होता है अर्थात् अनुभूतिमय रूप। यन्त्रि-काल के क्रियाएँ न इसी दृष्टि में एतर को दृश्यमान किया था और उसके मन मान की गजना रही थी। उपा व सो न्य सुखन्यायित्व और प्रकाश की अनुभूति में उपा की भावमति हुई है जो भावधम का सम्बन्ध एतर का बन गई है। मननव एतर (प्रवृत्ति या पुरुष) की अनुमान का सामान्य भावपरक आधार कल्पित कर लिया गया है। इसमें बुद्धि की कार्य छाट (विशेषण) का भव काश हो नहीं है। वस्तु के भाव चेतन प्रभाव (अनुभूति) के प्रसरण ही इतर और प्रवृत्ति की गति-स्थायक सत्ता का प्राकट्य मनुष्य की चेतना में स्वयमेव हो जाता है। इस निमित्त की प्रविष्टि में वस्तु का प्रभाव उसकी प्रति विज्ञाता या प्रान और उसका समाधान - य तीना भावगत प्रतिक्रिया होते हैं। प्रत इन प्रविष्टि में धम अत्यन्त साग होता है प्रायशः सह प्राकट्य की स्थिति रहता है। दूसरी बात यह भी गन्व है कि इसमें वहिर्वस्तु अर्थात् इतर का अनुमान होने में इतर की अनुभवविधता अथवा प्रवृत्ति की अवहेतना की जानी है। उपा पूर्वी क्षिति में अन्ति हान बान्ता भोक्ति वृत्ति में होकर एतर में प्रादुर्भूत न्य। उन जानी है। एतन व्यक्ति मन साधन दृष्टि के रूप में सजित होती है। मनुष्य की न्यो प्रगति में धम और रहस्यवादी की उत्पत्ति हुई है। धम और रहस्यवादी में बाहर का नकार होता ही है व्यक्ति का भी नकार होता है। यही दाना व ऊपर किमा अथ सत्ता का कल्पित कर लिया जाता है और धम सत्ता व्यक्ति तथा इतर मानों की नगण्य करती हुई ब्रह्माण्डमान काय व्यापार के लिए उत्तरदायी समझी जाती है। अतिमानसिक ईश्वर (मृतीय) पर धार्मिक एवना व्यक्ति का नगण्य बना न्यो है जबकि रहस्यवाद का धम पूणत आत्मस्थ होने से इतर की अवहेतना ही नहीं करता, सत्ताव व्यक्ति को भी नकारता है। एतन धम सत्यव चट्टा सम्बन्ध का ही मष्ट कर देती है। व्यक्ति व नाण्य होने ही उगता सम्बन्ध नहीं होता, उसका धार्मिक व्यस्तता होता है। यथार्थ सम्बन्ध गण्य का ही होता है।

मनुष्य एवं दूसरी प्रकार का सम्बन्ध न्यो का प्रयत्न करता है। एतर

को वह निरपेक्ष भाव से अपनी चेतना में प्रतिष्ठित करता है और अचानक सहाजानुभूति या मूढ वं द्वारा उस इतर वं एक मूढ रूप की प्राप्ति हो जाती है। तत्पश्चात् वह उस रूप का बौद्धिक निगमन (deduction) करता है। उस प्रकार इतर के मूढ और सामान्य रूप की वह स्थापना कर सकता है। इससे इतर का प्रत्यय उत्पन्न होता है। यह प्रत्यय चूँकि मूढ होता है इसलिए अनेक रूपां को एक में समाहित कर सकता है। अनेकरूपता भौतिक अथवा अस्मितादिन हानी है प्रत्यय बनने ही उस भौतिकता और इन्द्रियाग्रय से वस्तु मुक्त हो जाती है। प्रत्ययवाणी ज्ञान समिति वचार्थिक अधिक है—प्लेटो से नजर होगल तक की परम्परा इसे प्रमाणित करती है। यहाँ भी इतर और यकिन दोनों की अपेक्षा प्रवहेलना होनी है। यहाँ इतर का मतर्भाव (प्रत्यय) बौद्धिक रीति से होता है। इसलिए दोनों का सहज और प्रकृत रूप नहीं रहता। यकिन की सजीवता वतमानता सम्पूर्णता स्मृतना नष्ट हो जाती है तथा दूसरी ओर इतर इसी प्रकार परिवर्तित मूढ रूप में गहीन होना है। एक स्थिर शाश्वत वचार्थिक सार सत्ता विकसित हुना है चाहे वह प्लेटो का शिव (The Good) हो या हागन का विश्वामा (The world Mind) जिसमें यकिन और इतर की प्रत्ययगत एकरता निहित रहना है।

प्रत्ययवाणी दशन की रीति में वचि का अनुभाव होता है अर्थात् अत के दृष्टि-क्षेत्र से वहि का रूप निर्धारित किया जाता है उसका सार निकाला जाता है। स्पष्ट है कि यन्म अत अर्थात् यकिन का सहजानुभूति पर आश्रित बौद्धिक क्रिया में समुच्च मानस प्रमुख है। दूसरे पक्षों में प्रत्यय की एकता अतनिष्ठ एकरता ही है वहिनिष्ठ नहीं। इसी बौद्धिकता से उत्पन्न वचानिक दृष्टि में वहिर्भाव इतर प्रमुख हो जाता है। फलतः व्यक्ति और इतर को इतर (वचि) वं दृष्टि क्षेत्र से समझा जाता है। वचानिक का उद्देश्य अतनिष्ठ किसी एकता की स्थापना करना नहीं है बल्कि इतर और अहम के शुद्ध बुद्धिनिष्ठ रूप की खोज करना है। यहाँ सामञ्जस्य की चेष्टा के स्थान पर वस्तु का 'नान' प्रधान है। पर यन्म नान व्यक्ति निरपेक्ष हुना है तथा भौतिक इन्द्रियावनवित अनेकता की मूढ एकता की उपरान्त तक पहुँचता है। यहाँ भी सामाग्यीकरण और मूढ विधान उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना प्रत्ययवाणी दशन में वचानिक ज्ञान मन्त्र का अनुगत हो जाता है जिसमें मन्त्र मन्त्र नहीं रहती बल्कि जीवन निरपेक्ष तत्त्व बन कर नीरुध और निर्विशेष हो जाता है। फलतः विज्ञान में भी सहज प्रकृत इतर का विस्तोकरण हुना है

अथान् व्यक्ति और वस्तु ज्ञान का मूलमोहन का उनका सम्पूर्णता का नष्ट का किया जाता है। दूसरी बात यह कि वह कि सत्य मया वहिष्टिनेः म समझ की चला की जानी है जिम्मा परिणाम यह होता है कि प्रत्ययवादी दान व समान यत्न भी मजबूत व्यक्ति निरमृत ही रहता है तथा किसी प्रत्ययवद या नियमवद प्रकृति (Law governed Nature) व सामान्य (Generality) म यह अपनी निश्चितता व अतिशयता (Uniqueness) को रखा जाता है। बाहर व सत्य म भीतर का जानने या उसके रूप का निर्धारित करने का वैज्ञानिक प्रयत्न भी सम्बन्ध की सजावट और सम्पूर्णता में बाधा पहुँचाता है क्योंकि हम भी व्यक्ति नगण बनता है और व्यक्ति का सारभूत विचार गण्य। इसका अनिश्चित धाधुनि विज्ञान न विज्ञान व भूतधार बुद्धि (Rationality) व सम्मग्य में प्रसन्नबिह्व लगा दिया है।

इस प्रकार धर्म की माककता रहस्य की अनिश्चितता प्रत्ययवादी की नीतिगत प्रवृत्ति और विज्ञान का वहिष्टि म सामान्यता—मय म मजबूत व्यक्ति और तत्त्ववद एतर के एकता निश्चित निर्जोव और पराग रूप स्थिर होना है। इतरमन्त्रि यकिन ज्ञाना पूण है कि इन एक पक्षी (फरत सम्पूर्ण) दृष्टिकोण की पकड़ म नहा आता इनका नक्षमणरक्षा में बाहर उभरता रहता है। उसी आना विधानगत अस्पष्टता अनिश्चितता और बहुपिता व कारण वह इन दृष्टिकोण व पारित म बढ गनी जाता। क्योंकि ये सब दृष्टिकोण उसके व्यक्तिवद व किसी एक अंग (भाव बुद्धि या सहजानुभूति) में उठा एकता प्रत्ययगत रूप म्यापित करत रह हैं। प्रत्ययवादी ज्ञान उसके सम्पूर्ण का आभाव कहना करता है ता विज्ञान उस कल्पना की स्वभाव में अलग समझते हुए भी उस ज्ञान म प्रयत्नगीन दिया देता है। सामाजिक विज्ञान के आधार पर हम तथ्य का सामान्य म समझा जा सकता है। सक्षप म य सार दृष्टिकोण व्यक्ति और एतर की समय निरूपे व वैचारिक धारणा म परिवर्तित करत रह है। फरत यकिन—जीवन और धारणा म सक्षप मन्द होना रहा है।

•

अस्तित्ववादी की उत्पत्ति व भूत म यहा सम्बन्ध विज्ञान का स्वभाविक अति प्रता और प्राप्ति दृष्टिकोण (धर्म ज्ञान विज्ञानादि) का निरपेक्षता

का बाध रहा है। अस्तित्वज्ञान भूत ही यह स्वीकार कर ले चला है कि व्यक्ति की समुचित परिमाणा नहीं दी जा सकती क्योंकि वह अस्पष्ट ही नहीं स्वतन्त्र और सक्रिय भी है। वह गजब अनन्तानी अस्तित्व है फलतः निश्चित स्थिर और मुग्राह्य नहीं है। अतः उसका अनुमान मन्त्र का भी का निश्चित स्थिर और ग्राह्य रूप नया प्राप्त किया जा सकता। पूर्वोक्त दृष्टिकोणों की असफलता और निरर्थकता हम स्पष्ट प्रमाणित करती है। अतः आवश्यक है कि व्यक्ति के किंगी अन्तिम स्थिर प्रत्ययगत रूप की गन्तव्यताओं से बचा जाये उसे हमारे धृष्ट म्वाभावित और सहज स्पष्ट प्रियाशील रूप में ही धृष्ट किया जाये। फलतः उन बौद्धिक और सहजानुभूतिनिष्ठ माध्यमों तथा रीति प्रक्रियाओं का भी परित्याग किया जाये जिनमें व्यक्ति के निश्चित सारभूत अस्तित्व की धारणा उपलब्ध की जाती है। जब हम इस बात का स्वीकार कर लेते हैं कि मनुष्य का अस्तित्व अस्पष्ट और सक्रिय है तब हम यह भी मान लेना पड़ता है कि इस अस्तित्व के इन्धनपरक रूप (अर्थात् वर्तमान) का बीज ही उसका सत्यस्वरूप है उसके भूत और भविष्य का सम्बन्धवाध हमारी सामर्थ्य के अतीत है उसके भूत तथा भविष्य का हम अनुमान अवश्य ले सकते हैं पर अनुमान अनुमान ही होता है सत्यमान न। क्योंकि मनुष्य की अस्पष्टता और सक्रियता की स्पष्ट (एकांगी) और निष्क्रिय (स्थिर) बनाने में ही अनुमित स्वरूप निर्मित होता है। स्पष्ट है कि मनुष्य की अस्तित्वगत अस्पष्टता तथा सक्रियता धारोपित स्पष्टता और निष्क्रियता में उद्भूत अनुमान का गन्त मिट्ट कर देती। इसी तथ्य का ध्यान कर अस्तित्ववादी विचारक आगमन निगमनपरक बौद्धिक पद्धति के स्थान पर वगन (इन्धनपरक-वगन पद्धति) पर बल देने हैं। इस प्रकार ये बुद्धि (rationality) की सर्वशक्तिता की सम्मति कर रहे हैं।

अस्तित्व की अस्पष्टता और सक्रियता का अर्थ है सम्भावना। यह सम्भावना भविष्य में घटनेवाला नियमनामित घटना या निश्चित रूप नहीं है बल्कि बुद्धि भी न। मन्त्र का सामर्थ्य है। फलतः यह बलानिक के भाविष्य (Prediction) का सीमा में नहीं आती। मनुष्य के बारे में यह नया बात मानना कि विषय सम्भाव्य परिस्थिति में वह उमा विषय सम्भाव्य प्रकार में व्यवहार करेगा जमा बलानिक न के विषय में वह मानता है कि सम्भाव्य विषय तत्पक्ष में न सम्भाव्य विषय प्राप्त में परिवर्तित न जावेगा। अतः

को उस अनकता में रहना पड़ेगा उससे सम्बद्ध होना पड़ेगा । यह सम्बन्ध रागात्मक (यास्पस बूबर) हो सकता है और वातात्मक (सात्र) भी । बौद्धिक दृष्टि से यह सम्बन्ध सामान्य न होन से असंगत (absurd) होता है ।

सत्त्व में अस्तित्ववादी गणित सामान्य और वार्तात्मक (मनुष्यविषयक) धारणाओं को अस्वीकार करता है । इसी के साथ साथ वार्तात्मक वस्तुपरकता तथा वैज्ञानिक पद्धति को भी अनुपयोगी मानना है अर्थात् बुद्धि या विवेक (reason) की सर्वव्यापकता को अस्वीकार कर असंगति का स्वीकार करता है । अनेक को सत्ता के स्वीकार द्वारा व्यक्ति को प्रधानता देता है यह व्यक्ति स्वतन्त्र, वरुणधर्मी मूल्य सजक सम्बन्ध विधायक और उत्तरदायी व्यक्ति है जिसकी आकांक्षा सर्वसामान्य समाधान प्रस्तुत करने की नहीं है बल्कि प्रमाणिकता प्राप्त करने की है । यह सुगुणसे मिश्रित व्यक्ति सांसारिक वास्तविक और साधारण सजीव अस्तित्व है । इतर से अपने अस्तित्व को सम्पूर्णता के साथ यगित सबध विधान इसकी नियति है चाहे यह सम्बन्ध मैं-तू (बूबर का सद्भाव युक्त हो अथवा मैं x अ य' (सार्नी) का रूप भावी ।



अस्तित्ववाद के उद्भव के लिए प्रायः युरोप का युद्धोत्तर विपन्न विश्वजन और विघटित मानव अवस्था को उत्तरदायी संस्रष्टा जाता रहा है । युद्ध अविवेक पाशविक बलि का परिणाम सिद्ध हुआ जिससे युरोपिय व्यक्ति की बुद्धि-श्रद्धा विज्ञान की कल्याण कारिता मानव उन्नति धार्मिक धारणाएँ ध्वस्त हो गई । परिणामतः अस्तित्ववादी जगत् व्यक्ति-परक आत्मनिष्ठ दान का जन्म हुआ जिसमें युद्धप्रभूत अनिश्चय भय मृत्यु बोध सङ्कट व्यक्ति निष्ठता धार्मिक भाव प्रतिबिम्बित हैं स्मृत बाहरी स्तर पर यह बात ठीक भी है किन्तु सूक्ष्म दार्शनिक स्तर पर यह सम्पूर्ण सत्य नहीं है । क्योंकि यह अस्तित्ववाद के प्रचार प्रसार अथवा लोकप्रियता का स्पष्टीकरण ही करती है इसका उद्भव के मूल कारणों का ज्ञान नहीं देता ।

वस्तुतः अस्तित्ववादी सामान्य (general) के विरुद्ध विषय (particular) का विद्रोह है । यह सत्य है कि यह विषय विविध कारणों से इस सत्य में अधिक सुगुण दृष्टा है किन्तु दान विज्ञान के प्रारम्भ से ही यह यथार्थ अपना मिर उठाता रहा है । धन्य के सामान्य के प्रति गवा का भाव पेटो के सवादा

म ही प्राप्त होता है। हरेविनटस जिसका आधुनिक रूप बगसा का दशन है का प्रवाह (Flux) प्रकारान्तर से व्यप्टता और व्यस्थिरता की स्वीकृति और सामान्य का अस्वीकार है। असल में सामान्य विषय और विषयी के द्वत का समाहार है। दूसरे स्तर पर यह विषय और विषयियों की विशेषताओं को समतल कर एकता स्थापित करने का प्रयत्न करता है। प्रत्ययवादी दशन और विज्ञान दोनों में इस प्रक्रियागत सामान्य का सर्वोपरि स्थान रहा है। हीगन व बिस्वातमा और विज्ञान के अणु में कोई मूलभूत प्रक्रिया और निष्पन्नगत अन्तर नहीं है।^{*} दोनों ही विधि की उपेक्षा कर मूल्य और पथक सामान्य की स्थापना करते हैं चाहे इस सामान्य में व्यक्ति धारमा (प्रत्यय वादी) वद्वस्य हो या बहिःयाप्त पन्थ (विज्ञान)। धम के क्षेत्र में भी ईश्वरीय सामान्य की प्रमुता द्रष्टव्य है। ईसाई धम का प्रारम्भिक ईश्वर श्रद्धाश्रित भावमय दृष्टाई था कि तु मन्थकान में यामस एकवीनाज के प्रभाव से वह अस्तित्वानियम सार या धारणा बन गया था। व्यक्तित्व ईश्वर के गुण प्रमण क्षीण हो गये थे। इसके साथ साथ चर्च के बौद्धिकीकरण और मस्यागत अधिधार व वारण भी एक नम प्रकार के सामान्य की स्थापना हुई कि व्यक्ति तुच्छ नगण्य और काटवत बना दिया गया था। पश्चिमा समाज-व्यवस्था के निर्माण में इन तीनों सत्वा का हा यागन्त रहा है। फलतः सामाजिक स्तर पर भी सामान्य की प्रतिष्ठा हुई जिससे परिणाम स्वरूप विविष्ट व्यक्ति एक उपकरण या समाज-यंत्र के एक धम में परिवर्तित होता गया और हा रहा है।

स सवदाश्रीय सामान्य के जगुल में छुटकारा प्राप्त करने और व्यक्ति सत्ता की पुनर्प्रतिष्ठा करने की भावना का परिणाम है अस्तित्ववाद का आविर्भाव। कीर्कगार्ड द्वारा अस्तित्व धर्म के प्रचलन और विशेषार्थी प्रयोग से पूर्व पास्कन (Pascal) और आगुस्टाइन (Augustine) में इस सामान्य का भावात्मा विरोध प्राप्त होता है। कीर्कगार्ड से यह सत्यन्त प्रबल भावावेग का रूप में प्रकट हुआ है। कीर्कगार्ड ने प्रत्ययवादी दशन (हीगल) विज्ञान और धम (चर्च) तीनों स्तरों पर विनाह किया और विषयीभाव (subjectivity)

* प्रत्ययवादी में निगमन (deduction) का प्रयोग होता है जबकि विज्ञान में आगमन (Induction) का।

की सबल स्थापना की है। यास्पस मामात्र सात्र पुनर आदि मत्र अस्तित्ववाणी
 त्स अनैक रूप सामांय का विरोध करते हैं और उक्ति मत्ता के महत्त्व का
 प्रतिपादन।

वामवी सना म यह अधिक गोवप्रिय हुआ है। पास्वल नीत्से, काँगाद
 देस्नेवस्की आदि की विचार प्रवृत्ति अस्तित्ववाणी हान हुआ भी अपन समय
 का प्रभावित नही कर सकी था। प्रत्ययवाणी दर्शन क प्रामुख्य और विनाश
 श्रित मानवतावाद क प्रबोधयुगीन आन्शों के कारण उस युग को अस्तित्ववाणी
 यथा मानव अयथाय लगा था। किन्तु बीसवी सनी क प्रत्ययवात् धम और
 मानवतावात् क अप्रामुख्य से इसको सबप्रमुख मान जाने लगा है। आज के
 पश्चिमी (विशेषतः यारापीय) व्यक्ति का स्थिति क पर्यवेक्षण से यह बात
 अविना सफ़रता म समझ म आयगी।

यह निर्विवाद है कि विज्ञान क विरास ने पश्चिम म अभूतपूर्व उन्नतपुष्पल
 मचाइ है। विज्ञान म उस प्रबोधयुगीन मानववात् या उत्तरतावा की ऐतिहासिक
 दृष्टिराण का नाम हुआ जिसम व्यक्ति क महत्त्व की स्थापना बहिर्याप्ति
 पत्ताय क सम्भ म हुआ। प्रकृति विज्ञय है जाना जा सकती है पत्ताय हा
 सत्य है आदि वातनिक उपरि प्रजय वाग्णाघा न व्यक्ति को आशावात ता
 अनय दिया कुछ अश तक विनिष्ट के महत्त्व की स्थापना भी की किन्तु
 अन्तत उस प्रकृति क सामांय का एक अग हा स्थिर किया। यह मानवता
 वात् उक्ति धार धार विषयगत अर्थान् मानात्मक हाता गया। स्त्री भावभूमि
 से तमा प्रजापति की राजनातिक यम्या म यह बात सिद्ध हाती है।
 यम्या का राज्य विषयगत वस्तुपरक (objective) उद्भूतता का ही राज्य है
 व्यक्ति का नही। हाय उठान म (role) जन रा बात तय हाती है तो बहा
 उक्तिगत विवेक आत्मा और नैतिक अनुभूति की उपेक्षा हाता अनिवाय है।
 रूप तरह प्रजापति की राज्य यवस्था भा व्यक्ति गोपक ही सिद्ध हाती है
 पामिम नातिम और माकिम की यवस्थाया म तो यह हाता अत्यन्त
 स्वाभाविक है। सामाजिक स्तर पर विज्ञान का बला विघटनकारी प्रभाव
 पत्ता है। यत्र उद्यान और नगरीकरण का उत्तरोत्तर उन्नति से वृद्धिप्रधान
 पारिवारिक भावात्मक दृष्टि मलिन हा चुका है जिसका कुप्रभाव परिवार
 और पौम माना सेवा क मर्यादा पर पडा है। यत्र न मनुष्य का बुद्धिराति
 पुत्रा बना दिया है उद्यान न उा आविक सिद्ध किया है और नगरीकरण न

उसमें बाजार संबंध भावना (Market relations) उत्पन्न की है। धान्य मूँदा व बिनाश व साथ स्वयंय प्रतिभाषण मूल्या की स्थापना हुई है और य मूँदा अधिकांश (पूर्वोक्त यथा धान्य व विनाश व कारण) धन पर धीरे स्थूल ननु व नम मीमित रह गये हैं। फलन मनुष्य का भावात्मक परस्परवचन की वृत्ति निर्जीव (atrophied) होती जा रहा है। वस्तुतः यथा मनुष्य के मनुष्यत्व का नष्ट करना जा रहा है। वस्तु दवात हा ममान व चानू हाने म उसकी गारगिक वृत्ति उत्तेजित हा गई है और विनाश निर्मित वस्तुधर व आविष्कार म उसकी बुद्धि की सहता भी नष्ट हाने वाला है। अभी प्रमानवोपना का तथ्य कर एरिक्फ्राम (Eric Fromm) न कहा है कि उन्नासवा शती म इसवर मरा ना बीमबी शती म मनुष्य ही मर गया है। स्पष्ट है कि जो यथा मनुष्य का दाम था आज समाप्त हो गया है। फलन सुमान के धन प्रेम भावा का आवेदन न होकर भय घणा निरयकता आदि की अनुभूति का जमदाना बन गया है। दूसरी तरफ़ इसा वधानिक यथा का परिणाम है सबसेहारी आणविक धन जो मनुष्य की कीड़े मकाड़े के समान मार डालता है। उसकी मनुष्य भा मानवायगी रहा। विश्व-युद्ध का दुष्प्रताप वधानिक विकास की सहायकारिता का प्रमाणित न, कन्ती विनाशालय बुद्धि-वृद्ध और मानवतावादी की भी निरयक मिट्ट वरगी हैं। युद्ध मनुष्य के अधिवर पाणविरता और आसरी वृत्तिया का परिणाम है। मनुष्य विवशनीय नहीं है यथा पीडाभाषक प्रतीति 'वकिन' की पुनर्प्रतिष्ठा की माग करती है तथा यह भा प्रमाणित करना है कि मनुष्य भाविष्यनीय (Predictable) नहीं है। यह सत्य है आवश्यकता (Necessity or determinism) का पुनरावृत्ति है।

स्पष्ट है कि युद्ध अनित्य पीडा मृत्यु रोग नाशना निर्यात सत्त्वानना धान्य व नशरा का समाना अधिन यथा म हुआ है पर इस इन्हीं तत् सोमित मानना 'वायगमन' नहीं है। अधिन यथा 'सोमनि' मानवतावादी की तरह जीवन के पुनर्वास का ही नहीं यथा यथा उता वृष्ण पथ की उपस्थिति की भी स्वीकार करना है। किन्तु इसा साथ ही साथ वह व्यक्ति व महत्त्व उता स्वतंत्रता उतरा'पक्ष भावजन पुनार का गरिमा धान्य व्यक्ति प्रतिस्थापन गुणा का मवन समयन करना है। प्रकारानुसार म यह धन वृष्ण पथ व प्रति भा विनाश करना है। नमरा पान म उद्भूत व्यक्तिगत प्रामाणिक जीवन

की प्रतिष्ठा नमका उद्देश्य है। मूलमन पश्चिम रसात् मानवतावात् ही है जिसमें प्रबोधयुगीन भ्रमाश्रित भावुक्तता नहीं है। आधुनिक अस्तित्ववाद्या म व्यक्ति प्रतिष्ठा पर अत्यधिक बल दिये जाने में नष्ट फिर एक अलगवा का गिकार अवश्य हो गया है पर शक्ति व म त्व की स्थापना इसमें शुद्ध हो रही है।

सम्भव यह तो अस्तित्ववात् सजीव जीवन का धारणा (Idea) व प्रति यत्किन्त घम का सस्यागत घम के प्रति प्रयत्न सदानुभव का मूलम बुद्धि विचार के प्रति, व्यक्ति चेतना का समूह योजना के प्रति सम्पूर्ण का अनगव के प्रति मानव स्वातन्त्र्य का भौतिक नियति (determinism) व प्रति दशन का विज्ञान के प्रति अनेकविध विरोध है जिस मूत्रात्मक ढग से हम विशिष्ट का सामान्य के प्रति विरोध कह सकते हैं।



क्या अस्तित्ववात् पण्डित सत्रस्त और भयाकुल आधुनिक पश्चिमी यक्ति का स्वास्थ्य प्रदान कर सका है या कर सकता है? आधुनिक व्यक्ति की पीड़ा के स्वरूप दो कारण हैं — (१) अनगव और (२) समू या वस्तु तत्त्व में समाहित होती हुई उसकी आत्म गता या मानवीयता। इन दोनों के बिना उसकी चेतना स्तब्ध निष्क्रिय और विकृत-यविमू हो गई है। वह अनिश्चय विमगति दुविधा और शङ्का व कुहरे में कोई आधार टटोल रहा प्रतीत होता है। क्या अस्तित्ववाती दशन में उसका कोई उपाचार दिखाई देता है?

यह तब अनगव का समस्या का प्रश्न है मुझे नहीं लगता कि अस्तित्ववात् का निश्चय मूल्य तथा आशापूर्ण समाधान प्रस्तुत करता है। साध और कामू जैसे निरीश्वरवाती अस्तित्ववादियों में तो यह अनगव अपनी चरम सीमा पर दिखाई देता है। अतः म यति का असंगतियुक्त (absurd) मवध है भणार् यह प्रबोधमय अनर्थ और अविश्वस्य है। अतः (प्रवृत्ति) और अन्तः (मन्त्रिक) पूजन विच्छेदनीय हैं। अतः मर चुका है प्रत्यय (Ideas or essences) अन्तः विज्ञान मूल्य सामान्य ज्ञान में सजीव ग्रहण व लिए अनावश्यक है—म भावभूमि व आधार पर मात्र अन्तः और अहम में प्रसाध्य विभिन्न व्यापित करना है। इयानि ज्ञान में नकार का नाश ही है मन्त्रा

है। यह न मात्र नाना स्वभावतः इनमें सधप या दृढ़ उत्पन्न करता है। परिणामस्वरूप व्यक्ति और वस्तु का अलग-अलग मृत्युपथ रहेगा। इतना ही नहीं साधन-यक्ति को अथवा यक्तियों से भी हमारा संबंध लिए 'अलग' देखना है। जमा पहले साधन पर विचार करते समय स्पष्ट किया जा चुका है कि साधन का व्यक्ति द्वाकालीय विषयी विषय दृढ़ का विषयी (Subject) है जो अथवा का विषय रूप (object) में ही ग्रहण करना है जबकि अथवा व्यक्ति भी चेतन होने के कारण पूर्णतः विषय नहीं है। इसलिए सधप अवश्यमात्र है। साधन में यह अवस्था चरमावस्था प्राप्त करता है क्योंकि यही यक्ति के गरीर तथा मस्तिष्क में ही नही स्वयं चेतना (मस्तिष्क) में भी विषयी विषयात्मक विभाजन स्वीकार कर लिया गया है। कीर्तना जो विषयी भाव को ही अपना प्रमाण मानता था भी यह अवस्था का कोई निश्चित समाधान नहीं दे सका है यद्यपि उसके दर्शन में मनुष्य और ईश्वर के अलग-अलग पर अधिकार न किया गया है। ईश्वर और व्यक्ति में अलग सामाजिक स्थापित भी होता है किन्तु फिर वही अवस्था पुनः जी उठता है। इसीलिए वह बार-बार 'पुनरावृत्ति' की बात कहता है। वस्तु और व्यक्ति चेतना में सामाजिक तो विषयी भाव ही को प्रामाणिक मानने का दर्शन में अक्षय्य ही है। यादगम और वृत्ति में यादगम स्तर पर प्रेम के द्वारा सामाजिक स्थापित करने का प्रयत्न दृष्ट्य है किन्तु यह भी अनिश्चित अस्थिर और अस्थायी होने का कारण मजबूत और वाय का आधार नहीं बन सकता है। यह यादगम अनुभूति मात्र रह जाता है जिसमें द्वेष या सधप तो नहीं होने पर सम्पूर्ण सम वय न होने में निर्माणक शक्ति का जागृता भी अनुभवित ही रहता है। यह हम अहम हाने के लिए अहम है जसी स्थिति प्रतीत होती है। हेडगर में अवस्था भू की धारणा के द्वारा सामाजिक की निर्मित हुई है। पर यह सामाजिक भी आज के व्यक्ति के लिए समाधान रूप नहीं हो सकता क्योंकि हेडगर भू की पुनस्मृति (recall) की बात करता है पर यह पुनस्मृति क्या है? के विषय में भी नहीं रहता है। यह तरह अस्तित्ववाद यह क्षेत्र में अक्षय्य सिद्ध हुआ है और इससे सधप सिद्ध होने की सम्भावना भी नहीं है। क्योंकि हम इनके धर्म पर धर्म (अहम) को अधिक महत्व दिया गया है।

वस्तु अवस्था का समाधान अस्तित्ववाद में इंगित नहीं है क्योंकि

नम समस्या के रूप में अन्तर्गत प्रमुख नहीं है। सामान्यता सामूहिकता या वस्तुपरतता की अति-याप्ति का संकट प्रमुख है। यह अस्तित्व संकट का दर्शन है जो बहानिव मशीन की मोनिकता राज्य की वायसी नियम शक्ति उद्योग की अमानवीयता समाज का सामूहिकता और युद्ध की पागलिकता का प्रतिरोध का सजग प्रयत्न करता है। इसलिए नम यक्ति को बनपूर्वक सर्वांगिक गण्यनम और महत्वपूर्ण माना गया है जिसका परोक्ष प्रतिफल यह हुआ है कि यक्ति और भी अन्तर्गत और आत्मनिष्ठ बनता गया है।

सामूहिकता से बचाव का रास्ता है उससे सम्पूर्ण मुक्ति अर्थात् यक्ति की स्वतन्त्रता की सख्त स्थापना। सब अस्तित्ववादीयों में यक्ति की स्वतन्त्रता स्वीकृत हुई है। यक्ति चेतना स्वतन्त्र है क्योंकि यक्ति चुनाव करता है। चुनाव की प्रिया किसी वायकारण परम्परा से बद्ध नहीं है। चुनाव व्यक्ति चेतना की स्वतन्त्रता को प्रमाणित करना है और स्वतन्त्रता चुनाव की सभावना का आधार निमित्त करती है। मनुष्य स्वतन्त्र है इस कारण से वह चुनाव कर सकता है अर्थात् नियति और वायकारण के नियमन से अनीत हो सकता है। कीर्तगात्र से नवर बूझतर सब चर्चित विचारक यक्ति चेतना के स्वातन्त्र्य पर बने हैं। नम स्वतन्त्रता का अवशिष्ट शक्ति रूप कीर्तगात्र और नीत्यों में प्राप्त होता है तो बौद्धिक जिज्ञासु हृद्गेर और तान में। तान में यह चरममीमा तक पहुँच चुकी है। रूसी आदि रोमंटिक विचारकों का प्रदाय ही यह यक्ति स्वतन्त्रता है जिससे अस्तित्ववाद में सत्त्वविद्यागत तत्त्व का रूप द्रष्टा गया है। साथ ही उसी का समान मानना है कि मनुष्य जन्म से ही स्वतन्त्र है परन्तु रूसी का दूसरा बात कि जन्म-रस स्थान पर बद्ध भा है का अवधारक करता है। मनुष्य स्वतन्त्र है अर्थात् मनुष्य का विचार परम्परा नियम और व्यवस्था से बद्ध नहीं है। वह व्यवस्था में उत्पन्न होता है किन्तु अपनी उस व्यवस्था को पुनर्निर्मित कर स्वयं की व्यवस्था स्थापित करता है। नती चेतना की स्वतन्त्रता की बौद्धिक भाग है चेतना का अवस्तुता या कुछ नहीं होना। कुछ या वस्तु होने ही जाना उस कुछ या वस्तु में गवाहित फल निहित और बद्ध हो जाना है। इसलिए नम यजन का होना के लिए चेतना का अवस्तु (Nothing) का रूप में धारणा तादृश अनिवार्यता है। कुछ नहीं है परिणामन स्वतन्त्र है अर्थात् मनुष्य चेतना की वास्तविक प्रत्यक्ष निश्चित प्रवृत्ति परिभाषा या मारना नहीं है। व्यक्ति अपनी प्रवृत्ति परिभाषा या

साधना का निमाण स्वयं - दस्तु व सम्पन्न म-करता है जो अन्तिम न० होता । गतिमान और अन्तिममनुष्ठान मान यह किसी भा स्थूल और सूक्ष्म बंधन म साधित नही हो सकता । "मनिए वर प्राप्ति निर्दिष्टि अथान् उद्देश्यों मूल्या और स्व मर्तिन व्यवस्था का भी अनिवार्य करना पड़ता है । "म मिया म उमरा का गतिगतर वस्तु या वस्तुगत सीमा नही है । न दश का यथान न वात का प्रतिगद्य और न मूय-विचार की अनिवार्यता । व्यक्ति स्वयं का स्थापित करना है यह उसका स्वतन्त्र चुनाव है । वह वात का उत्पन्न करना है । "मका चेतना म भूय प्रकृत बाई मूय नही होने और न बाई प्रयय हा हान है । य मूय और प्रयय उसका चेतना रा हा ममम ममम पर नृदभूत हान है फान मत्रक का सामर्थ्य व काग्य वह नम स्वतन्त्र है "न मूय का अस्थापित स्वतन्त्र निर्माण हा है ।

मूय्य नम स्वतन्त्रता म वच नही गजता । मात्र की भाषा म वह स्वतन्त्र हान व गति समिगम है । "म ममा म रा व करना हा पडा है । चुनाव नहीं करन का निश्चय भी चुनाव हा है । अर्थात् स्व स्वतन्त्रता का प्रयाग है । वापर व्यक्ति हान नही कारण और वापरना म वापरना का चुनाव है । फान यह स्वतन्त्रता व्यक्ति व मभूय काय व्यवहार म प्रियमाण है । सामान्य तत्त्व व रूप म नही व्यक्तिगत चेतन-निर्या व रूप म । स्पष्ट है कि व्यक्ति नम स्वतन्त्रता व कारण वस्तु परित्रा अथ और जगत् म वक्त है । विच्छिन्न माना है अर्थात् बनना है । अर्थात् अनगत मृत् हा उत्पन्न हा जाना है । साध और कामू नग अनगत का समाविष्ट मान कर स्वाकार करन है । "मनिए व्यक्ति का पोषा पातन सप्राग और अविज्ञता का स्वाकार करत है ।

पर क्या व्यक्ति की स्वतन्त्रता अनन्ती आर्या त्र और परम है ? क्या ऐसा नही जगता कि स्वतन्त्रता इम रूप म मज्जाव व्यक्ति की अनुभूति और प्रिया न होकर एक वायवा धारणा मात्र रह जानी है । साध कहता है कि न चुनाव ना चुनाव है अर्थात् स्वतन्त्रता है तो फिर न चुनाव और चुनाव क्या एक ही है ? फिर स्वतन्त्रता और स्वतन्त्रता म भेद क्या है ? क्या न चुनाव परतन्त्रता नही है ? व्यक्ति चुनाव है स्वतन्त्रता व कारण और न चुनाव को ना जन्ता है इसा स्वतन्त्रता व कारण । साध बुद्धि विगद्य

* साध विपन्न धारण म य वान मविस्तर विवचन हा चुकी है ।

करते हुए भी त्रिद्विगत प्रत्यय की स्थापना कर रहा है । सामान्य व्यक्ति नहीं चुनने का काय अर्थात् स्वतन्त्रता का कारण न । अर्थात् अथ अनन्त विपश्चिता सूर्य कारणों से करता है । निम्न सामान्य के प्रति साथ विरोध करता है उभी सामान्य स्वतन्त्रता का वन स्थापना करता या नगना है । यह निराश्रित स्वतन्त्रता एक अभात्मक विचार मात्र प्रतीत होता है । इसमें तार्किक समझति भी प्रतीत होती है । छोटा गुण विचार करें । मात्र चेतनामा की अनन्तरता मानता है क्योंकि व्यक्ति अनन्त है । अतः इस चेतनामा का सजन काय निमित्त या विरव भी अनेक है मित्र है फलतः द्वैतात्मक है परन्तु क्या है ? सात्र की चेतनाएँ मूलतः अहरश्चि हैं अमरा मननर ज्ञान चाहिए कि अनेकश स्थित होने हुए भी इनमें मूलभूत समानता है । क्योंकि सममानता तो जसा वन स्वयं स्थापना करता है अथ म उपाय होती है । यदि वन परम्परा मस्कार धत्ति परिवर्ण आदि विधा या भी वजन उस चेतना म न है तो फिर वन चेतनामा म द्वैतात्मक विरोध क्या उपजता है अह का म अनन्त विर भेदात्मक विराम क्या होता है । स्वतन्त्रता और स्वतन्त्रता का मध्य क्या होता है ? अथ चेतना म न चुनन और चुनन की भिन्नता क्या है ? मात्र के ज्ञान में अथका कोई स्पष्ट समझित उत्तर प्रायःहारिक स्तर पर नहीं प्राप्त होता । यह भी ज्ञान के समान परम (absolute) सामान्य स्थापित करने की चेष्टा मात्र जगता है त्रिगुण अर्थात् सत्ताय मानव के वाक्यनाप म क्या धाण सम्यक् है ।

अधिक ज्ञान म ज्ञाना मवन्तम्भन व चेतना नहीं प्राप्त होती । मात्र स्वीकारता है कि स्वतन्त्रता काय न मभि रक्त होती है अथान् चुनने करने के काय म ही स्वतन्त्रता है । राय बाहर (भौतिक और सामाजिक परिवेश) म घटित होता है अन्तर म घटित होने वाला राय त्रिगुणमय मात्र है । यदि यह काय बाहर घटित होता है तो राज्य म प्रभावित भी होता है स्वतन्त्रता एक अन्तर्गत बाहर म मामित है । यह राज्य या मानवमय रहे तो भी बाहर की मयना मामा या अथक ज्ञान या अविश्रमण करणी । अस्तव

* मात्र के म और अथ के मध्यम म यह स्वतन्त्रतामा या नो सरय है । अथ यदि यह मात्र स्वतन्त्रता तो अनिरास सीमा अथ स्वतन्त्रता को न मानता है ।

सारता का निमाण स्वयं - वस्तु व सम्पद म-वरता है जो अन्तिम नहीं होता। गतिशील और अतिप्रमणयुक्त होने से यह किसी भी स्थूल और सूक्ष्म वस्तु से सीमित नहीं हो सकता। अतएव यह अन्ती निमित्त अर्थात् उद्देश्य मूल्य और स्व सञ्चिन् व्यवस्थापना का भी अतिप्रम करता रहता है। अतः प्रिया में उसका कोई गतिराज्य वस्तु या उस्तुगन सीमा नहीं है न दश का व्यवहार न वात का प्रतिराज्य और न मृत्यु-विचार की अनिवार्यता। अतः स्वयं का स्वीकार करना है यह उसका स्वतन्त्र चुनाव है। वह वात का उत्पन्न करता है। उसकी चेतना में पूर्व प्रवृत्त कोई मूल्य नहीं होने और न कोई प्रत्यय ही होने हैं। य मृत्यु और प्रत्यय उसका चेतना से ही समय समय पर उद्भूत होने हैं वात मजबूती का माध्यम के कारण वह द्रव्य स्वतन्त्र है अतः मृत्यु का अन्वेषण स्वपरम स्थिति ही है।

मनुष्य का स्वतन्त्रता में उच्च नहीं सकता। मात्र की भाषा में वह स्वतन्त्र होने के लिए अभिशप्त है। उस समार में उपाय करना ही पड़ता है चुनाव नहीं करने का निश्चय भी चुनाव ही है। अर्थात् स्व स्वतन्त्रता का प्रयोग है। कायर व्यक्ति होने नहीं चाहता और कायरता में कायरता का चुनाव है। अतः यह स्वतन्त्रता व्यक्ति के सम्पूर्ण काम व्यवहार में प्रियता है। सामान्य तन्त्र के रूप में नहीं व्यक्तिगत चेतन-प्रिया के रूप में। स्पष्ट है कि व्यक्ति इस स्वतन्त्रता के कारण वस्तु परियोजना और शरीर से कटता है विच्छिन्न होता है अकेला बनता है। अर्थात् अन्तर्गत महत्त्व ही उत्पन्न हो जाता है। साथ और काम ही अन्तर्गत का स्वाभाविक मान कर स्वाकार करते हैं। अतएव व्यक्ति की पाना प्राप्त्य सदाग और क्षणिकता का स्वीकार करते हैं।

पर क्या व्यक्ति की स्वतन्त्रता अन्ती आर्थिक और परम है? क्या ऐसा नहीं लगता कि स्वतन्त्रता इस रूप में मात्राव व्यक्ति की अनुभूति और प्रिया न हाकर एक वायवी धारणा मात्र रह जाती है? साथ कहना है कि न चुनाव भी चुनाव है अर्थात् स्वतन्त्रता है तो फिर न चुनाव और चुनाव क्या एक ही है? फिर परतन्त्रता और स्वतन्त्रता में भेद क्या है? क्या न चुनाव परतन्त्रता नहीं है? व्यक्ति चुनाव है स्वतन्त्रता के कारण और न चुनाव को या चुनाव है अन्ती स्वतन्त्रता के कारण। साथ बुद्धि विराज

* साथ विषयक अध्याय में यह बात मविस्तर विवचन हो चुका है।

करते हए भी बुद्धिगत प्रत्यय की स्थापना कर रहा है । सामान्य यक्ति नहीं चुनने का कार्य अपनी स्वतन्त्रता के कारण नहीं करता बल्कि अनेक विवशता सूचक कारणों से करता है । जिस सामान्य के प्रति मान विद्रोह करता है उसी सामान्य स्वतन्त्रता का वह स्थापना करता या जगता है । यह निराधन स्वतन्त्रता एक अमात्मन विचार मान प्रतीत होता है । इसमें तार्किक अमगति भी प्रतीत होती है । थोड़ा सूक्ष्म विचार करें । सात चेतनाओं की अनेकता मानता है क्योंकि यक्ति अनेक हैं । अतः इन चेतनाओं का सजन कार्य निमित्त या विश्व भी अनेक है अतः फलतः अद्वैतात्मक है पर ऐसा क्यों है ? सात की चेतनाएँ मूल अद्वैत हैं अतः मूलत्व होता चाहिए कि अनेकता स्थित होने हुए भी एक ही मूलभूत समानता है । क्योंकि सममानता तो जसा वह स्वयं स्वीकार करता है अतः में उत्पन्न होती है । यक्ति वश परम्परा संस्कार यक्ति परिदृश आदि किसी का भी बंधन उस चेतना में नहीं है तो फिर इन चेतनाओं में अद्वैतात्मक विभेद क्या उपजता है अतः का यह अनेक विभेद भेद मात्र विकास क्या होता है । स्वतन्त्रता और स्वतन्त्रता का संबंध क्या होता है ? इस चेतना में न चुनने और चुनने की भिन्नता क्या है ? सात के जगत में मनुष्य को स्थित समचित्त उत्तर प्रावहारिक स्वरूप पर नहीं प्राप्त होता । यह भी हीरा के समान परम (Absolute) सामान्य स्थापित करने का चेष्टा मान जगता है जिसका अन्तिम सजीव मानव के वाक्पताप में क्या शीघ्र सत्य है ।

अतः जीवन में ऐसा स्वतन्त्रत्व या चेतना नहीं प्राप्त होती । सात स्वीकारता है कि स्वतन्त्रता काय में अभिप्रेत होती है अतः चुनने करने के कार्य में ही स्वतन्त्रता है । काय बाह्य (भौतिक और सामाजिक परिदृश) में घटित जाता है अतः में घटित होने वाला काय निराधन मात्र है । यक्ति यह कार्य मात्र घटित जाता है तो मात्र में प्रभावित भा जाता है स्वतन्त्रता इस अज्ञान मात्र में प्रभावित है । वह मात्र ही अतिशय रचे ता भी बाह्य का अपना सामान्य का अज्ञान का अतिशय करती । अतः

सात में ही और अतः परम्परा में यह स्वतन्त्रता का ही सत्य है । अतः अतिशय मान स्वतन्त्रता का निराधन भीमा अथ स्वतन्त्रता को ही मानता है ।

सर्वत्र व समय मात्र व समान ना कहने का स्वतन्त्रता प्रयोग व नियम का
की भूमि और नाजी आक्रमण की परिणाम आवश्यक है भारत का बुद्धिजीवी
गमा नष्ट कर सकता। दूसरी ओर व्यक्ति की चेतना का कार्य उद्देश्यपरक
भा जाता है चाहे वह उद्देश्य व परिवर्तन में समय हो पर उद्देश्य तो
रहता ही है। हम अस्तित्ववादी भा स्वीकार करते हैं। यह उद्देश्य का
अनुगामी चेतना में रहता अतिवाध है उद्देश्य वस्तु मय है पर अनुगामी
नष्ट नहीं जाता। चेतना अनिश्चितता (Vagueness) नहीं है पर वह परम
स्वतन्त्रता भी नहीं है। वस्तुतः हमारे रोमांसवादी में एक तथ्य योग्य था
जिस पर अतिव्यक्ति ध्यान नहीं दिया गया। हम मनुष्य की स्वतन्त्र व माय
मय प्रकृति की क्षमता है। यद्यपि हमारे सामाजिक और
राजनीति अतिव्यक्ति या फिर भा उमम यह अर्थ निराशा हो सकता है कि
मनुष्य की चेतना अज्ञान व वस्तु में स्थित होना व कारण उमम बढ़ है
किन्तु हम उद्वेग में मुक्ति प्राप्त करने पर अनुकूल उद्वेग निमित्त करने की
क्षमता उमम है। निम्नलिखित उद्वेग निमित्त की शक्ति ही उमम
स्वतन्त्रता है।

हमारे अतिव्यक्ति व स्वतन्त्र पर अनुकूल वस्तु व कारण अस्तित्ववादी
में समाजशास्त्र नामि (Ethical) तत्त्व और राजनीति की उपयोगिता नहीं
है। न ही वह निश्चित व्यवस्था हममें नहीं है। हम अनुसार व्यक्ति का
स्वतन्त्रता में ही निहित मूल्य प्राप्त करता है जो अस्तित्व और व्यक्तिनिष्ठ
होता है। फलतः समाजशास्त्र निश्चित व्यवस्था व निश्चित सिद्धांत हो
अनुपपन्न है। मात्र की महत्वागमी नामि * (Simone de
Beauvoir) ने अतिव्यक्ति अस्तित्ववादी अतिव्यक्ति और व्यक्तिनिष्ठता का
नाम व्यवस्था का स्थापना का है जो नीति नहीं है। व्यक्ति का मनमाना अस्तित्व
मूल्य-मापक मात्र सिद्ध होता है। हमारे अस्तित्ववादी तत्त्व (existen-
tial & logic) का भी विकास नहीं हुआ है। अतिव्यक्ति नियम परक ज्ञान और
गणानुभूति का अतिव्यक्ति और व्यक्तिनिष्ठता जिसे तत्त्व व्यवस्था का पक्षधने
नहीं है। अतिव्यक्ति नामि तत्त्व नहीं बल्कि मात्र है। राजनीति व मध्य
में ही निश्चित सिद्धांत का अनुकूल वस्तु निश्चित होता है। मैं का

* Ethics of Ambiguity — Simone de Beauvoir

समूह से सम्बन्ध सामाजिक स्तर पर इन तीनों का अभाव में स्थापित हो ही नहीं सकता ।

यह स्वतन्त्रता व्यक्ति को सब के लिए उत्तुंग गरी बनाती है । उसीलिए उसके अभाव भी उसी के हैं समाज या बाहरी व्यवस्था से उद्भूत नहीं । फलतः समाज या बाहरी व्यवस्था के सुधार का न तो जाणसूत्र प्रेरणा हो उसमें । सकती है और न इस सुधार से किमा सामग्र्यपूर्ण मानसिक शांति भी प्राप्त होगी । स्वतन्त्र व्यक्ति भी अनगाव पीड़ा आतङ्क से उत्तना ही ग्रस्त रहेगा जितना परतन्त्र । फिर व्यक्ति स्वतन्त्र बनने के लिए प्रयत्न ही क्या कर ? मान स्वतन्त्रता को उद्देश्य न मानकर सत्त्वविद्यागत नस्त्र मानना है । उसीलिए इसमें भावी सामग्र्य की शिवनर स्थिति अनुस्यूत है । यह एक प्रवाह है किया है जो स्वयम् से ही गतिशील रहती है इसलिए यह गति का उपचार न होकर रोग की प्रक्रिया ही सिद्ध होता है ।

निष्कपत अस्तित्ववाद आधुनिक पश्चिमी व्यक्ति के कारण मन का प्रति-विम्ब है उसका यथानय्य वर्गन है किन्तु समुचित समाधान नहीं है । इसमें जावन-स्थिति का चिन्तन है परम्बन्ध जीवन-रूप का पूरणया अभाव ही निर्यात होता है । फलतः यह अच्छा मनाविमान है पर दुरा जीवन-रूपन या भूतातीतविद्या (Metaphysics) सिद्ध होता है ।

